

आप
तूफ़ान
को रोक सकते हैं।
बाइबल कैसे आपको चटान की
तरह मजबूत बनाती है।

आप
तूफ़ान
को रोक सकते हैं।
बाइबल कैसे आपको चटान की
तरह मजबूत बनाती है।

डैनी कनेडी
†
हू हूकनेक्शन्स
प्रेस

आप तूफान को रोक सकते हैं। बाइबल कैसे आपको चटान की तरह मजबूत बनाती है।

स्वत्वाधिकार © 2022 डैनी कनेडी /आवरण की रूपरेखा: गिनो मोरो

जिन पवित्रशास्त्र के उद्धरणों के साथ (एनएलटी) अंकित है, वे पवित्र बाइबल, न्यू लिविंग ट्रांसलेशन से लिए गए हैं। स्वत्वाधिकार © 1996, 2004, 2015 टिंडेल हाउस फ़ाउंडेशन। टिंडेल हाउस पब्लिशर्स, कैरोल स्ट्रीम, इलिनॉय 60188 की अनुमति से उपयोग किया गया है। सर्वाधिकार सुरक्षित।

जिन पवित्रशास्त्र के उद्धरणों के साथ (एएमपीसी) अंकित है, वे एम्प्लीफाइड® बाइबल, क्लासिक संस्करण से लिए गए हैं। स्वत्वाधिकार © 1954, 1958, 1962, 1964, 1965, 1987 द लॉकमैन फ़ाउंडेशन। अनुमति से उपयोग किया गया है।

जिन पवित्रशास्त्र के उद्धरणों के साथ (ईएसवी) अंकित है, वे ईएसवी® बाइबल (पवित्र बाइबल, इंग्लिश स्टैंडर्ड वर्शन®) से लिए गए हैं। स्वत्वाधिकार © 2001 क्रॉसवे, जो गुड न्यूज पब्लिशर्स की एक प्रकाशन सेवकाई है। अनुमति से उपयोग किया गया है। सर्वाधिकार सुरक्षित।

जिन पवित्रशास्त्र के उद्धरणों के साथ (एनआईवी) अंकित है, वे पवित्र बाइबल, न्यू इंटरनेशनल वर्शन®, एनआईवी® से लिए गए हैं। स्वत्वाधिकार © 1973, 1978, 1984, 2011 बिब्लिका, इंक.™। जॉन्डरवन की अनुमति से उपयोग किया गया है। विश्वभर में सर्वाधिकार सुरक्षित। www.zondervan.com। “एनआईवी” तथा “न्यू इंटरनेशनल वर्शन” संयुक्त राज्य अमेरिका के पेटेंट एवं व्यापार-चिह्न कार्यालय में बिब्लिका, इंक.™ द्वारा पंजीकृत व्यापार-चिह्न हैं।

जिन पवित्रशास्त्र के उद्धरणों के साथ (केजेवी) अंकित है, वे किंग जेम्स वर्शन (केजेवी) से लिए गए हैं। किंग जेम्स वर्शन सार्वजनिक अधिकार क्षेत्र में है।

जिन पवित्रशास्त्र के उद्धरणों के साथ (जे. बी. फिलिप्स) अंकित है, वे जे. बी. फिलिप्स द्वारा रचित द न्यू टेस्टामेंट इन मॉडर्न इंग्लिश—संशोधित संस्करण से लिए गए हैं। इन्हें स्क्रिब्लर, जो साइमन एंड शूस्टर, इंक. का एक विभाग है, की अनुमति से पुनर्मुद्रित किया गया है। स्वत्वाधिकार © 1958, 1960, 1972 जे. बी. फिलिप्स। सर्वाधिकार सुरक्षित।

जिन पवित्रशास्त्र के उद्धरणों के साथ (टीएलबी) अंकित है, वे द लिविंग बाइबल से लिए गए हैं। स्वत्वाधिकार © 1971। टिंडेल हाउस पब्लिशर्स, कैरोल स्ट्रीम, इलिनॉय 60188 की अनुमति से उपयोग किया गया है। सर्वाधिकार सुरक्षित।

जिन पवित्रशास्त्र के उद्धरणों के साथ (टीपीटी) अंकित है, वे द पैशन ट्रांसलेशन® से लिए गए हैं। स्वत्वाधिकार © 2017, 2018, 2020 पैशन एंड फायर मिनिस्ट्रीज़, इंक.। अनुमति से उपयोग किया गया है। सर्वाधिकार सुरक्षित।
ThePassionTranslation.com।

जिन पवित्रशास्त्र के उद्धरणों के साथ (एनसीवी) अंकित है, वे पवित्र बाइबल, न्यू सेंचुरी वर्शन से लिए गए हैं। स्वत्वाधिकार © 1987, 1988, 1991 वर्ड पब्लिशिंग, डलास, टेक्सास 75039। अनुमति से उपयोग किया गया है।

जिन पवित्रशास्त्र के उद्धरणों के साथ (सीईवी) अंकित है, वे कॉन्टेम्पररी इंग्लिश वर्शन से लिए गए हैं। स्वत्वाधिकार © 1991, 1992, 1995 अमेरिकन बाइबल सोसायटी। अनुमति से उपयोग किया गया है।

प्रकाशितकर्ता: टूकनेक्शन्स प्रेस
978-0-9846967-7-2

विषय-सूची

लेखिक की ओर से एक संदेश	6
प्रस्तावना	7
परिचय	9
अध्याय 1 आप तूफान को रोक सकते हैं.....	11
अध्याय 2 आप सोच सकते हैं कि आप बाइबल पढ़ते हैं, परन्तु.....	16
अध्याय 3 यह सब किस विषय में है?.....	20
अध्याय 4 आप जिस प्रकार देखते हैं, उसी प्रकार समझते हैं.....	24
अध्याय 5 पूर्णतः दृढ़ विश्वास.....	30
अध्याय 6 यीशु प्रकट किए गए.....	38
अध्याय 7 अपना ध्यान स्थिर रखें.....	44
अध्याय 8 ध्यान भटकाने वाली बातें.....	49
अध्याय 9 आपके पास आशा अवश्य होनी चाहिए.....	56
अध्याय 10 तूफान के बीच आनन्द और शान्ति.....	61
अध्याय 11 आइए, पढ़ने के लिए तैयार हों.....	66
अध्याय 12 वे पुरुष जिन्होंने नया नियम लिखा.....	71
अध्याय 13 क्या हम नए नियम पर विश्वास कर सकते हैं?.....	77

कुछ अंतिम विचार	84
नए नियम की पुस्तकों का संक्षिप्त सारांश	86
संदर्भ सूची	101

लेखिक की ओर से एक संदेश।

हो सकता है आपने यह पुस्तक इसलिए उठाई हो क्योंकि आप किसी ऐसी विनाशकारी परिस्थिति का सामना कर रहे हैं जिसे बदला नहीं जा सकता। मेरा हृदय आपके लिए करुणा से भर जाता है। मैं भी कभी ऐसी ही निराशा और बेबसी की स्थिति से गुजर चुकी हूँ। यदि मैं आपका दुःख और पीड़ा दूर कर सकती, तो अवश्य करती। परन्तु मैं ऐसा नहीं कर सकती। मैं केवल आपको इतना विश्वास दिला सकती हूँ कि चाहे अभी आपको ऐसा न लगता हो, फिर भी आप इस तूफ़ान से सुरक्षित निकल आएँगे, और आप हमेशा वैसा अनुभव नहीं करेंगे जैसा इस समय कर रहे हैं। आपके हृदय को भीतर तक झकझोर देने वाली यह पीड़ा धीरे-धीरे कम हो जाएगी।

मैं आपको यह भी विश्वास दिला सकती हूँ कि आप अकेले नहीं हैं। परमेश्वर आपके साथ हैं। वह सब कुछ देखते हैं, आपकी पुकार सुनते हैं, और भली-भाँति जानते हैं कि आप किस परिस्थिति से होकर गुजर रहे हैं। मैं आपसे आग्रह करती हूँ कि अपने जीवन के इस तूफ़ान के बीच प्रभु को दृढ़ता से थामे रहें। जब इस्राएल के महान राजा दाऊद के चारों ओर तूफ़ानी आँधियाँ गरज रही थीं, तब उन्होंने लिखा, “हे परमेश्वर... मैं तेरे पंखों की छाया में तब तक शरण लिए रहूँगा, जब तक यह भयंकर तूफ़ान टल न जाए।” (भजन संहिता अध्याय 57 आयत 1)। परमेश्वर के अनुग्रह से आप भी इस दुःखद घटना से पार निकल आएँगे।

यद्यपि मैं आपको यह पुस्तक पढ़ने से निरुत्साहित नहीं करना चाहती, फिर भी मुझे आपके साथ स्पष्ट और ईमानदार होना चाहिए। यह पुस्तक मुख्य रूप से पाठकों को उनके जीवन में आने वाले अगले तूफ़ान के लिए तैयार करने के उद्देश्य से लिखी गई है, न कि केवल उनकी वर्तमान परिस्थिति में सहायता करने के लिए। मैं प्रभु के कार्य को किसी सीमा में नहीं बाँधना चाहती। सम्भव है कि इन पृष्ठों में आपको ऐसी कोई बात मिल जाए जो इसी समय आपको कुछ सांत्वना और राहत प्रदान करे। परन्तु यदि इस समय आपको ऐसा लगे कि यह पुस्तक आपकी वर्तमान आवश्यकता के अनुसार नहीं है, तो इसे त्याग मत दीजिए। इसे कुछ समय के लिए अलग रख दीजिए और कृपया किसी उपयुक्त समय पर इसे फिर से पढ़िए।

डैनी कनेडी
अप्रैल 2022

प्रस्तावना

हम ऐसे समय में जी रहे हैं जो अत्यन्त अशान्त और उथल-पुथल से भरा हुआ है। लोग मानसिक रूप से थके हुए, निराश, दबाव में और भयभीत हैं। हमारे चारों ओर अधर्म, फूट, कटुता और छल-कपट फैला हुआ है। इसके अतिरिक्त, हम में से प्रत्येक व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में अनेक व्यक्तिगत संघर्षों का भी सामना कर रहा है।

मैंने यह पुस्तक इसलिए लिखी है कि आपको उन साधनों से सुसज्जित कर सकूँ जिनकी आवश्यकता इन अशान्त समयों में दृढ़ता से बने रहने के लिए है। ये साधन बाइबल में पाए जाते हैं। बाइबल न केवल यह बताती है कि हमारे संसार में क्या हो रहा है, बल्कि यह भी बुद्धि और मार्गदर्शन प्रदान करती है कि इन सब परिस्थितियों के बीच हमें किस प्रकार चलना चाहिए। परमेश्वर का वचन “हमारे पाँव के लिए दीपक और हमारे मार्ग के लिए उजियाला है।” (भजन संहिता अध्याय 119 आयत 105)

हम मानव इतिहास के इस वर्तमान युग के अन्त के निकट पहुँच रहे हैं। यीशु ने कहा था कि इस समय की पहचान बढ़ते हुए संकटों और विपत्तियों से होगी। संसार पर जो कुछ आने वाला है, उसका सामना करने के लिए केवल कलीसिया में उपस्थित होना या बाइबल अध्ययन समूह का सदस्य होना पर्याप्त नहीं होगा। आपके लिए यह आवश्यक है कि आप स्वयं जानें कि बाइबल क्या कहती है। जिन गम्भीर समयों का हम सामना कर रहे हैं, उन्हें देखते हुए बाइबल का अध्ययन आपके जीवन की प्राथमिकता बन जाना चाहिए।

शायद आप यह सोच रहे हों, “कृपया मुझे बाइबल पढ़ने के लिए मत कहिए। मेरे पास पहले ही बहुत-से काम हैं!” मैं आपसे बाइबल पढ़ने के लिए अवश्य कहूँगी, परन्तु मैं आपको यह भी बताऊँगी कि उसे प्रभावी ढंग से कैसे पढ़ा जाए। मैं आपको बाइबल का उपयोग करने की ऐसी व्यावहारिक विधि बताऊँगी जिससे आपको अधिकतम लाभ प्राप्त हो और आप बढ़ती हुई अव्यवस्था तथा दबाव का दृढ़ता से सामना करने के योग्य बन सकें। मैं जिन-जिन लोगों को जानती हूँ जिन्होंने इस पुस्तक में बताए गए बाइबल-पठन के तरीके का पालन किया है, वे सभी आपको बताएँगे कि इससे उनके जीवन और जीवन की परिस्थितियों का सामना करने के तरीके में अद्भुत परिवर्तन आया। वे यह भी कहेंगे कि यह उनके लिए और उन लोगों के लिए, जिनके जीवन पर उनका प्रभाव पड़ता है, उनके द्वारा किया गया सबसे उत्तम कार्य था और आज भी है।

मैं भली-भाँति जानती हूँ कि बहुत-से लोगों के लिए किसी भी प्रकार का अध्ययन करना एक चुनौती है। आज लोग पहले की तरह पढ़ते नहीं हैं, जब तक कि वह कोई संदेश या सामाजिक माध्यम पर प्रकाशित कोई संक्षिप्त लेख न हो। वास्तव में यही समस्या का एक बड़ा कारण भी है। हम कुछ ही मिनटों से अधिक समय तक किसी एक बात पर ध्यान केन्द्रित रखने की क्षमता खो चुके हैं। सामाजिक माध्यमों से लगातार मिलने वाली जानकारी ने लोगों की एकाग्रता की अवधि को बहुत कम कर दिया है और उनके मन को निरन्तर चलने वाले विचारों और शोर से भर दिया है। इसलिए सम्भव है कि आपको इनमें से कुछ बातों से स्वयं को अलग करना पड़े ताकि आपके पास पढ़ने का समय हो। आपको अपनी उस क्षमता को फिर से विकसित करने का प्रयास करना पड़ सकता है जिसके द्वारा आप निरन्तर बदलती हुई किसी स्क्रीन के बजाय किसी एक विषय पर अपना ध्यान स्थिर रख सकें। इसके लिए आपको कुछ नए और व्यावहारिक उपाय भी अपनाने पड़ सकते हैं।

हो सकता है आपके लिए बाइबल को ऑनलाइन पढ़ना अधिक सुविधाजनक हो। या फिर पुस्तक में लिखे हुए पाठ को देखते हुए उसके ध्वनि-रूप को सुनना आपको नियमित रूप से पढ़ने की आदत विकसित करने में सहायता करे। (मैं केवल वाहन चलाते समय या व्यायाम करते समय बाइबल के ध्वनि-रूप को सुनने की सलाह नहीं देती, क्योंकि वह बहुत आसानी से केवल पृष्ठभूमि में चलने वाली ध्वनि बनकर रह सकता है और उसका वास्तविक लाभ नहीं मिल पाता।)

बाइबल को नियमित रूप से पढ़ने वाला व्यक्ति बनने के लिए परिश्रम करना पड़ता है। परन्तु उससे मिलने वाले लाभ उस परिश्रम की तुलना में कहीं अधिक महान हैं।

इस पुस्तक को लिखते समय मेरे सामने कई उद्देश्य थे। पहला, इसे यथासम्भव संक्षिप्त रखना, और दूसरा, इसे यथासम्भव सरल और सुगम बनाना। इसी कारण अनेक विषयों को मैंने केवल संक्षेप में ही प्रस्तुत किया है। (इस पुस्तक में मैंने कुछ ऐसे अतिरिक्त साधनों की भी अनुशंसा की है जो कुछ विषयों को अधिक विस्तार से समझाते हैं।)

यद्यपि इस पुस्तक से आपको अपनी वर्तमान समस्या में भी कुछ सहायता मिल सकती है, फिर भी मेरा मुख्य उद्देश्य आपको भविष्य में आने वाली कठिनाइयों के लिए तैयार करना है। मैं चाहती हूँ कि आप नियमित रूप से बाइबल पढ़ने के लिए प्रेरित हों। मैं आपको किसी तात्कालिक या तुरंत मिलने वाले समाधान का आश्वासन नहीं दे रही हूँ, क्योंकि ऐसा कोई समाधान होता ही नहीं। परन्तु आपको बाइबल का एक प्रभावी पाठक बनने में सहायता देकर मैं आपको ऐसा अवसर दे रही हूँ, जिससे आप वे योग्यताएँ और समझ विकसित कर सकें जो भविष्य में आने वाली किसी भी परिस्थिति से पार निकलने में आपकी सहायता करेंगी।

मैं आपको विश्वास के साथ यह कह सकती हूँ कि जब आपकी वर्तमान कठिनाई समाप्त हो जाएगी, तब भविष्य में कोई और तूफ़ान आपका सामना करने के लिए तैयार होगा—और सम्भव है कि वह इससे भी अधिक भयंकर हो। परन्तु इस बार आप उसके लिए पहले से तैयार होंगे।

परिचय

हम एक ऐसे टूटे हुए संसार में रहते हैं जिसे पाप ने बुरी तरह से नष्ट और विकृत कर दिया है। परिणामस्वरूप, कठिनाइयाँ हम सबके जीवन में आती हैं। जीवन की परेशानियाँ हमारी शक्ति को क्षीण कर देती हैं और हमारी आशा को छीन लेती हैं। कभी हमें ऐसा महसूस होता है कि हम पूरी दुनिया पर विजय पा सकते हैं, और कभी ऐसी स्थिति आ जाती है कि हमारे लिए बिस्तर से उठना भी कठिन हो जाता है। हम केवल इस बात पर ही संदेह नहीं करने लगते कि परमेश्वर हमारी सहायता करेगा, बल्कि यह भी सोचने लगते हैं कि कहीं वह वास्तव में है भी या नहीं।

जीवन की चुनौतियों और पीड़ाओं से बचने का कोई उपाय नहीं है। परन्तु यह अवश्य सम्भव है कि हम कठिनाइयों का सामना बिना डगमगाए और पूरी तरह टूटे बिना करें। यह सम्भव है कि हम इस विश्वास को दृढ़ता से थामे रखें कि हम इन परिस्थितियों से निकल आएँगे, और इस आशा को बनाए रखें कि हमारी स्थिति अवश्य सुधरेगी। क्या आपके घर में एक पवित्र बाइबल है? यदि हाँ, तो आपके पास वही साधन है जिसकी आपको आवश्यकता है, ताकि आप जीवन के तूफ़ानों के बीच अटल खड़े रह सकें और आपके मार्ग में आने वाली हर कठिनाई पर विजय प्राप्त कर सकें।

पवित्र बाइबल संसार की किसी भी अन्य पुस्तक के समान नहीं है, क्योंकि यह हमें स्वयं परमेश्वर की ओर से प्राप्त हुई है। सर्वशक्तिमान परमेश्वर ने उन लेखकों को प्रेरित किया जिन्होंने इसके पृष्ठों पर लिखे गए वचनों को लिखा। पवित्र बाइबल एक अलौकिक पुस्तक है, क्योंकि इसकी विषय-वस्तु की प्रेरणा इस भौतिक संसार से परे एक आयाम से आई है। अलौकिक का अर्थ है, “ऐसे अस्तित्व या व्यवस्था से सम्बन्धित जो इस दृश्यमान और प्रत्यक्ष रूप से देखे जा सकने वाले ब्रह्माण्ड से परे हो”।

परमेश्वर का लिखित वचन उन लोगों के जीवन में आत्मिक वृद्धि और परिवर्तन उत्पन्न करने में समर्थ है जो उसे पढ़ते और उस पर विश्वास करते हैं। उसका वचन आपको परीक्षाओं और क्लेशों का सामना करते समय निर्भय बना सकता है। परमेश्वर का वचन आपको जीवन की विपत्तियों के लिए वास्तविक समाधान प्रदान करेगा और जीवन के तूफ़ानों के बीच भी आपके मन को सच्ची शान्ति से भर देगा।

दुःख की बात यह है कि बहुत कम लोग इन आशीषों का लाभ उठा पाते हैं, क्योंकि वे न तो यह समझते हैं कि पवित्र बाइबल वास्तव में क्या है और न ही यह जानते हैं कि उसका सही उपयोग कैसे किया जाए। इस पुस्तक में हम इन्हीं बातों पर विचार करेंगे और ऐसे व्यावहारिक उपाय प्रस्तुत करेंगे जिन्हें आप अपने जीवन में लागू करके उनका लाभ उठा सकें। हम कठिन परिस्थितियों को अपने जीवन में आने से नहीं रोक सकते। परन्तु

परमेश्वर के वचन—अर्थात् पवित्र बाइबल—के द्वारा हम उस अवस्था तक पहुँच सकते हैं जहाँ जीवन की कठिनाइयाँ हमें न तो विचलित कर सकें और न ही नष्ट कर सकें। इतना ही नहीं, हम यह भी सीख सकते हैं कि उथल-पुथल और संकट के बीच भी कैसे विजयपूर्ण और फलवन्त जीवन जिया जाए।



आप तूफ़ान को रोक सकते हैं।

जब यीशु इस पृथ्वी पर थे, तब उन्होंने दो घरों के विषय में एक सरल दृष्टान्त सुनाया, जिन पर एक भयंकर तूफ़ान आया। एक घर वर्षा, आँधी और बाढ़ के प्रचण्ड प्रहार के बाद भी अटल खड़ा रहा, जबकि दूसरा घर पूरी तरह नष्ट हो गया। इन दोनों घरों के बीच अन्तर केवल उनकी नींव का था। एक घर ठोस चट्टान पर बनाया गया था, और दूसरा रेत पर खड़ा था। यीशु ने स्पष्ट किया कि प्रत्येक घर की नींव इस बात का परिणाम थी कि उसके बनाने वाले ने परमेश्वर के वचन के प्रति कैसी प्रतिक्रिया दिखाई थी (मत्ती अध्याय 7 आयत 24 से 27)।

इस दृष्टान्त के द्वारा यीशु ने उस सत्य को प्रकट किया जो पवित्र बाइबल के आरम्भ से लेकर अन्त तक दिखाई देता है। जो लोग परमेश्वर के वचन को जानते हैं और उसे अपने जीवन में व्यवहार में लाते हैं, वे जीवन के तूफ़ानों का दृढ़ता से सामना कर सकते हैं। वे केवल जीवित ही नहीं बचते, बल्कि जीवन की हर चुनौती के बीच भी उन्नति करते हैं और विजयपूर्ण जीवन जीते हैं।

एक फलवन्त वृक्ष।

यीशु के तूफ़ान में बने घरों के विषय में दृष्टान्त सुनाने से सैकड़ों वर्ष पहले, इस्राएल के राजा दाऊद ने एक भजन की रचना की, जिसमें उसने उस मनुष्य का वर्णन किया जो “यहोवा की व्यवस्था से प्रसन्न रहता है, और उसकी व्यवस्था पर दिन-रात ध्यान करता है” (भजन संहिता अध्याय 1 आयत 2)। दाऊद ने ऐसे मनुष्य की तुलना उस वृक्ष से की, “जो बहते जल की धाराओं के किनारे लगाया गया है, जो अपने समय पर फल देता है, और जिसके पत्ते कभी मुरझाते नहीं” (भजन संहिता अध्याय 1 आयत 3)। जिस प्रकार वृक्षों की जड़ें उन्हें प्रचण्ड आँधियों के समय दृढ़ता से थामे रखती हैं और सूखे के दिनों में भी उनके लिए पोषण का स्रोत बनती हैं, उसी प्रकार जो लोग परमेश्वर के वचन पर मनन करते हैं, वे कठिन समय में भी निरन्तर फलते-फूलते रहते हैं।

मसीह में जड़ पकड़ना।

प्रेरित पौलुस ने भी उन जड़ों की इसी सच्चाई को दोहराया जो मनुष्य को स्थिर बनाए रखती हैं। उसने विश्वासियों को प्रोत्साहित किया कि वे “अपनी जड़ें [यीशु] में गहरी जमने दें” (कुलुस्सियों अध्याय 2 आयत 7)। पौलुस ने यह वचन मूल रूप से यूनानी भाषा में लिखा था। जिस यूनानी शब्द का अनुवाद “जड़ें” किया गया है, उसका अर्थ है, “स्थिर हो जाना”। स्थिर का अर्थ है, “दृढ़ता से स्थापित होना”।

जो व्यक्ति मसीह में जड़ पकड़ चुका होता है, वह जीवन के तूफानों के आने पर विश्वास से संदेह की ओर नहीं डगमगाता। न ही विपत्ति उसे परमेश्वर पर अपने भरोसे से हटा पाती है और न ही उसके भविष्य की आशा को छीन सकती है। वह न तो अस्थिर होता है और न ही टूटकर बिखर जाता है। जिन लोगों की जड़ें गहरी होती हैं, वे “[यीशु] से आत्मिक पोषण प्राप्त करते हैं और विश्वास में बढ़ते जाते हैं, सत्य में दृढ़ और सामर्थी बनते हैं” (कुलुस्सियों अध्याय 2 आयत 7)।

हम पवित्र बाइबल के द्वारा मसीह में जड़ पकड़ते हैं। यह अद्वितीय पुस्तक केवल हमें जानकारी ही नहीं देती या हमारी भावनाओं को ही स्पर्श नहीं करती। परमेश्वर का वचन उसे पढ़ने वालों के जीवन में सामर्थ्य, आनन्द, शान्ति, बुद्धि और विश्वास उत्पन्न करता है। पवित्रशास्त्र हमारे भीतर आत्मिक वृद्धि और परिवर्तन लाता है, जो बाहर से भी स्पष्ट दिखाई देता है, क्योंकि परिस्थितियों के प्रति हमारी प्रतिक्रिया तथा लोगों के प्रति हमारा दृष्टिकोण और व्यवहार बदलने लगता है। स्मरण रखें, पवित्र बाइबल एक अलौकिक पुस्तक है। “हर एक पवित्रशास्त्र परमेश्वर की प्रेरणा से रचा गया है” (2 तीमुथियुस अध्याय 3 आयत 16)।

प्रेरित पौलुस ने लिखा कि “परमेश्वर का वचन... तुम विश्वास करने वालों में प्रभावशाली रीति से कार्य कर रहा है—और जो लोग उस पर दृढ़ता से चलते हैं, उस पर भरोसा रखते हैं और उसी पर निर्भर रहते हैं, उनमें अपनी अलौकिक सामर्थ्य को प्रकट करता है” (1 थिस्सलुनीकियों अध्याय 2 आयत 13)।

प्रेरित पतरस ने विश्वासियों को परमेश्वर के वचन के लिए गहरी लालसा रखने की शिक्षा दी। “नवजात शिशुओं के समान उस शुद्ध आत्मिक दूध की लालसा करो, ताकि उसके द्वारा तुम्हारी आत्मिक उन्नति हो” (1 पतरस अध्याय 2 आयत 2)। एक छोटे बच्चे के लिए दूध सबसे पहली आवश्यकता होती है। वह उसके बिना जीवित नहीं रह सकता, और जब तक उसे दूध नहीं मिल जाता, तब तक वह रोना नहीं छोड़ता। और क्योंकि वह दूध पीता है, इसलिए वह केवल जीवित ही नहीं रहता, बल्कि बलवन्त भी होता जाता है।

पवित्र बाइबल हमारे भीतरी मनुष्य के लिए आत्मिक भोजन है। स्वयं यीशु ने कहा, “मनुष्य केवल रोटी ही से जीवित नहीं रहेगा, परन्तु हर एक वचन से जो परमेश्वर के मुख से निकलता है” (मत्ती अध्याय 4 आयत 4)। परमेश्वर के वचन की तुलना भोजन से करके यीशु हमें उसके उद्देश्य और महत्त्व को समझाते हैं। जब आप भोजन करते हैं, तो उसे अपने भीतर ग्रहण करते हैं, और वह आपके शरीर का भाग बन जाता है। यह जानना

आवश्यक नहीं कि भोजन किस प्रकार आपके शरीर को पोषण देता है, वृद्धि करता है और आपको सामर्थी बनाता है। परन्तु उसके लाभ प्राप्त करने के लिए उसका सेवन करना आवश्यक है।

ठीक इसी प्रकार, यह समझना आवश्यक नहीं कि पवित्र बाइबल आपके भीतर किस प्रकार परिवर्तन और रूपान्तरण उत्पन्न करती है; परन्तु उसके कार्य करने के लिए आपको उसे पढ़ना आवश्यक है। यदि आप परमेश्वर के वचन को ग्रहण करेंगे—अर्थात् उसे पढ़ेंगे और अपने भीतर स्थान देंगे—तो परमेश्वर का वचन वही कार्य करेगा जिसके लिए उसे दिया गया है।

मुझसे यह मत कहिए कि मुझे पवित्र बाइबल पढ़नी ही पड़ेगी!

मैं भली-भाँति जानता हूँ कि बहुत-से मसीहियों के लिए पवित्र बाइबल पढ़ना एक संघर्ष है। एक नहीं, बल्कि अनेक ईमानदार लोगों ने मुझसे स्वीकार किया है कि वे बहुत कम, या लगभग कभी भी, अपनी पवित्र बाइबल नहीं पढ़ते। मैं अक्सर इस प्रकार की बातें सुनती हूँ: “जब मैं पवित्र बाइबल पढ़ने का प्रयास करता हूँ, तो मुझे वह समझ में नहीं आती।” “वह बहुत नीरस लगती है और मुझे नींद आने लगती है।” “मुझे समझ नहीं आता कि पढ़ना कहाँ से शुरू करूँ।” “यह मुझे बहुत कठिन और बोझिल लगती है।”

हम स्वयं अपनी असफलता का कारण बन जाते हैं।

पवित्र बाइबल पढ़ना कठिन इसलिए भी लगता है क्योंकि हम स्वयं ही अपनी असफलता की भूमिका तैयार कर लेते हैं। हम निश्चय करते हैं कि हर दिन एक घंटा पहले उठेंगे और पवित्र बाइबल पढ़ेंगे। लेकिन पहले और दूसरे दिन हम देर तक सोते रह जाते हैं, तीसरे और चौथे दिन झुँझलाकर अलार्म घड़ी को कमरे के एक कोने में फेंक देते हैं, और पाँचवें दिन तो अलार्म लगाने की भी ज़हमत नहीं उठाते।

या फिर हम यह संकल्प करते हैं कि हर रात सोने से पहले दस अध्याय पढ़ेंगे। परन्तु पूरे दिन की भाग-दौड़ और थकान के कारण कुछ ही देर में हमें नींद आ जाती है। कुछ और प्रयासों के बाद हम पूरी तरह हार मान लेते हैं।

कुछ लोग “एक वर्ष में पूरी पवित्र बाइबल पढ़ें” जैसी योजना अपनाते हैं। वे पहली और दूसरी जनवरी को अपने निर्धारित भाग को पढ़ लेते हैं, लेकिन फिर कई दिनों तक पढ़ नहीं पाते। थोड़े ही समय में वे इतने पीछे रह जाते हैं कि उनकी भरपाई करना असम्भव-सा लगने लगता है। और यदि किसी प्रकार वे एक वर्ष बाद इस योजना को पूरा भी कर लें, तब तक उन्हें यह भी याद नहीं रहता कि वर्ष की शुरुआत में उन्होंने क्या पढ़ा था।

जब कभी हमें पवित्र बाइबल पढ़ने का समय मिल भी जाता है, तो जिस-जिस शब्द का अर्थ समझ में नहीं आता, हम वहीं रुककर शब्दकोश या किसी पवित्रशास्त्र की विरोधाभास देखने लगते हैं। या फिर हम अपना अधिकांश समय पृष्ठ के नीचे लिखी अध्ययन-टिप्पणियों को पढ़ने में बिताते हैं, क्योंकि वे हमें मूल पाठ से अधिक रोचक लगती हैं। परिणामस्वरूप, हम पवित्र बाइबल पढ़ने के स्थान पर उसके विषय में लिखी गई पुस्तकों और टिप्पणियों को अधिक पढ़ते रहते हैं।

नियमित और क्रमबद्ध पठन।

मैं आपको पवित्र बाइबल पढ़ने का एक ऐसा तरीका बताना चाहती हूँ जो इन कठिनाइयों का समाधान करेगा और आपके जीवन में निश्चित परिणाम उत्पन्न करेगा: पवित्र बाइबल का नियमित और क्रमबद्ध पाठक बनिए।

- नियमित पठन से मेरा अभिप्राय है कि प्रतिदिन (या जितना सम्भव हो सके उतने नियमित रूप से) थोड़े समय के लिए, लगभग पन्द्रह से बीस मिनट तक पवित्र बाइबल पढ़िए। हम सब अपने व्यस्त कार्यक्रम में से सप्ताह के कम-से-कम कुछ दिनों में इतना समय अवश्य निकाल सकते हैं।

- क्रमबद्ध पठन से मेरा अर्थ है कि नए नियम की शुरुआत से पढ़ना आरम्भ कीजिए। अपने निर्धारित समय के भीतर जितना पढ़ सकें, उतना पढ़िए। जहाँ पढ़ना समाप्त करें, वहाँ एक चिन्ह लगा दीजिए। अगले दिन उसी स्थान से पढ़ना आरम्भ कीजिए जहाँ आपने पिछले दिन छोड़ा था। जो बातें आपकी समझ में न आएँ, उनकी चिन्ता मत कीजिए। बस पढ़ते रहिए। जिन शब्दों या बातों को आप नहीं समझते, उनके अर्थ आप किसी अन्य समय शब्दकोश, टीकाओं या अन्य अध्ययन-सामग्री की सहायता से जान सकते हैं।

- जब आप पूरे नए नियम को पढ़ लें, तब उसे फिर से पढ़िए, और उसके बाद भी बार-बार पढ़ते रहिए। पवित्र बाइबल पढ़ना अपने जीवन की एक स्थायी आदत बना लीजिए। पुराने नियम को तब तक के लिए छोड़ दीजिए, जब तक कि आप नए नियम को अच्छी तरह समझने और उसमें निपुण होने न लगे। (इसका कारण मैं आगे इस पुस्तक में बताऊँगी।)

इस प्रकार पढ़ने का उद्देश्य पवित्रशास्त्र से परिचित होना है। समझ परिचय के साथ आती है, और परिचय नियमित तथा बार-बार पढ़ने से उत्पन्न होता है। जब आप नए नियम को बार-बार पढ़ते हैं, तब आपको उसके विभिन्न भागों के बीच सम्बन्ध दिखाई देने लगते हैं। आप समझने लगते हैं कि किसी पत्री में लिखा गया एक वचन सुसमाचारों में कही गई किसी बात को और अधिक स्पष्ट करता है। आप उन विषयों और विचारों को

पहचानने लगते हैं जो बार-बार सामने आते हैं, और इससे आपको समझ में आने लगता है कि वे अत्यन्त महत्वपूर्ण सत्य हैं। धीरे-धीरे पवित्र बाइबल आपके लिए स्पष्ट और अर्थपूर्ण होने लगती है।

इस प्रकार नियमित रूप से पढ़ने की आदत विकसित करना एक संघर्ष हो सकता है, क्योंकि हम सब अपने जीवन में बहुत व्यस्त रहते हैं, और इसका परिणाम भी सम्भव है कि तुरन्त दिखाई न दे। फिर भी स्मरण रखिए कि पवित्र बाइबल एक अलौकिक पुस्तक है, और वह आपके जीवन में अवश्य परिवर्तन उत्पन्न करेगी। आरम्भ में हो सकता है कि आपको उन परिवर्तनों का आभास न हो, परन्तु समय आने पर वे स्पष्ट रूप से दिखाई देंगे। यदि किसी कारणवश आप एक या दो दिन पवित्र बाइबल न पढ़ पाएँ, तो अपराधबोध में न पड़ें। परमेश्वर आपसे क्रोधित नहीं है। यदि आप एक या दो सप्ताह, या यहाँ तक कि एक महीने या उससे भी अधिक समय तक पढ़ने से दूर हो जाएँ, तब भी फिर से आरम्भ करने का दृढ़ निश्चय कीजिए। इस संघर्ष को जीतकर वापस आइए, क्योंकि यह प्रयास वास्तव में करने योग्य है।

लोग अक्सर मुझसे पूछते हैं कि मैंने पवित्र बाइबल को इतनी अच्छी तरह कैसे सीखा कि मैं उसे दूसरों को सिखा सकूँ। इसका उत्तर यही है कि मैंने नए नियम का नियमित और क्रमबद्ध रूप से अध्ययन किया। जब मैंने पहली बार पढ़ना आरम्भ किया, तब जो कुछ पढ़ता था उसका अधिकांश भाग मेरी समझ में नहीं आता था। परन्तु जैसे-जैसे मैं निरन्तर पढ़ती रही, वैसे-वैसे समझ आने लगी। इसने केवल मेरे जीवन को ही नहीं बदला, बल्कि उन बहुत-से लोगों के जीवन को भी बदल दिया जिन्होंने नियमित और क्रमबद्ध रूप से पवित्र बाइबल पढ़ने की आदत बना ली।

यदि आप पूरे नए नियम को आरम्भ से अन्त तक पढ़ने का दृढ़ निश्चय करेंगे और इस आदत में बने रहेंगे, तो एक वर्ष बाद आप पहले जैसे व्यक्ति नहीं रहेंगे। आप मसीह में स्थिर और अटल बनने की दिशा में बहुत आगे बढ़ चुके होंगे। जीवन की परिस्थितियों का सामना करने का आपका दृष्टिकोण बदल जाएगा। जीवन की विपत्तियाँ आपको पहले की तरह पूरी तरह पराजित या निराश नहीं कर पाएँगी। और जब जीवन का तूफान बीत जाएगा, तब भी आप दृढ़ता से खड़े रहेंगे।



कभी-कभी मेरी भेंट ऐसे सच्चे और ईमानदार मसीहियों से होती है जो स्वयं को पवित्र बाइबल का पाठक मानते हैं, परन्तु वे उसे उस प्रकार नहीं पढ़ते जैसा मैंने यहाँ बताया है। उनमें से बहुत-से लोग यह जानकर आश्चर्यचकित हो जाते हैं कि वास्तव में वे पवित्र बाइबल का नियमित अध्ययन कर ही नहीं रहे हैं।

यही हमें उस अगले विषय की ओर ले जाता है, जिस पर अब हमें विचार करने की आवश्यकता है।



आप सोच सकते हैं कि आप बाइबल पढ़ते हैं, परन्तु.....

क्या आपने कभी बाइबल को संयोग से खोलकर वचन चुनने का खेल खेला है? यह इस प्रकार होता है: आप बाइबल को किसी भी स्थान पर अनायास खोलते हैं, जिस पहली पंक्ति पर आपकी दृष्टि पड़ती है उसे पढ़ते हैं, और वह वचन आपसे बोल उठता है। मैं जानता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति, मैं स्वयं भी, ऐसा अनुभव सुना सकता है जब उसने संयोग से बाइबल खोली, कोई वचन सामने आया, और वह उसी क्षण हमारी आवश्यकता के बिल्कुल अनुरूप निकला।

परन्तु बाइबल को इस प्रकार संयोग से खोलकर वचन चुनने में समस्या यह है कि परमेश्वर का वचन इस रीति से पढ़े जाने के लिए लिखा ही नहीं गया था, क्योंकि यह एक-दूसरे से स्वतंत्र और असम्बद्ध आयतों का संग्रह नहीं है। बाइबल मूलतः अध्यायों और आयतों में नहीं लिखी गई थी। पवित्रशास्त्र के पूर्ण हो जाने के कई शताब्दियों बाद ये विभाजन संदर्भ-बिन्दुओं के रूप में और विशेष अंशों को सहजता से खोज पाने के लिए जोड़े गए। वास्तव में बाइबल पुस्तकों और पत्रों का संग्रह है, जिन्हें, अन्य सभी पुस्तकों और पत्रों की भाँति, आरम्भ से अन्त तक पढ़ा जाना चाहिए।

मान लीजिए कि मैं आपको पाँच पृष्ठों का एक पत्र लिखूँ, और आप तीसरे पृष्ठ के बीच से दो वाक्य, पाँचवें पृष्ठ के आरम्भ से एक वाक्य, और दूसरे पृष्ठ का अंतिम अनुच्छेद पढ़ लें; फिर उस पत्र को मोड़कर यह घोषित कर दें कि आपने उसे पढ़ लिया है। तब आपने न केवल मेरा पत्र पढ़ा ही नहीं, बल्कि उसकी विषयवस्तु की अच्छी समझ होना भी आपके लिए सम्भव नहीं है। और मैंने जो लिखा है उसके विषय में आप गलत निष्कर्ष निकाल सकते हैं। फिर भी हममें से बहुत अधिक लोग इसी प्रकार इस ब्रह्मांड की सबसे महत्वपूर्ण पुस्तक को पढ़ते हैं। हम अनायास चुनी हुई, अलग-अलग आयतें पढ़ते हैं।

निश्चय ही, मैं पढ़ता हूँ!

यद्यपि बहुत से मसीही सहजता से स्वीकार करते हैं कि वे बाइबल नहीं पढ़ते, फिर भी कुछ अन्य सचमुच मानते हैं कि वे बाइबल पढ़ते हैं, क्योंकि वे दैनिक भक्तिपाठ पढ़ते हैं, नियमित रूप से बाइबल-अध्ययन में भाग लेते हैं, बाइबल के विषय में पुस्तकें पढ़ते हैं और ऐसे उपदेश सुनते हैं जिनमें पवित्रशास्त्र के वचन उद्धृत होते हैं। मैं यह नहीं कह रही कि आपको इन गतिविधियों को बन्द कर देना चाहिए; किन्तु मैं यह अवश्य कह रही हूँ कि इनमें से कोई भी नियमित और क्रमबद्ध पठन का विकल्प नहीं है। मुझे समझाने दीजिए।

दैनिक भक्तिपाठ, बाइबल-अध्ययन, पुस्तकें और उपदेश।

भक्तिपाठ भी वैसी ही रीति अपनाते हैं। प्रत्येक पृष्ठ किसी विशेष बाइबल आयत से आरम्भ या समाप्त होता है, जिसे लेखक या लेखिका चुनता या चुनती है, और फिर उस आयत पर विस्तार करने के लिए शेष पृष्ठ का उपयोग करता या करती है। वह कुछ व्याख्यात्मक बातें, दृष्टांतात्मक कथाएँ और इस बात के उदाहरण दे सकता या सकती है कि उस आयत को अपने जीवन में कैसे लागू किया जाए। इस रीति में अपने आप में कुछ गलत नहीं है। परन्तु आपको समझना चाहिए कि आप तब भी अनायास चुनी हुई आयतें ही पढ़ रहे हैं, स्वयं बाइबल नहीं।

बाइबल-अध्ययन भी प्रायः अलग-थलग अंशों पर ही केन्द्रित होते हैं। बहुत से मसीहियों के लिए बाइबल-अध्ययन का अर्थ है किसी के बैठक-कक्ष में एकत्र होकर जो पढ़ा गया है उसे पढ़ना और उस पर चर्चा करना। मान लीजिए कि चिकित्सक बनने की इच्छा रखने वाले कुछ लोग निष्ठापूर्वक प्रत्येक सप्ताह एकत्र होते, चिकित्सा की किसी पाठ्यपुस्तक में से अनायास चुने हुए कथन पढ़ते, हर वाक्य पर गहन चर्चा करते और बताते कि वे शब्द उनके लिए क्या अर्थ रखते हैं। वे अपने अध्ययन के प्रति कितने ही समर्पित हों, क्या आप उन भावी चिकित्सकों में से किसी को अपनी शल्यक्रिया करने अथवा आपके लिए औषधि लिखने देंगे? सम्भवतः नहीं, क्योंकि आप जानते हैं कि वे भावी चिकित्सक अपने पठन को कितनी ही ईमानदारी से क्यों न करें, उन्होंने उस पाठ्यपुस्तक का वास्तव में अध्ययन नहीं किया है। उन्होंने केवल उसकी विषयवस्तु के कुछ अंशों को उनके मूल प्रसंग से अलग करके पढ़ा और उन पर चर्चा की है—जैसा कि हममें से बहुत से लोग अपने बाइबल-अध्ययनों में करते हैं।

सम्भव है कि आपको प्रतिभाशाली मसीही लेखकों की लिखी पुस्तकें पढ़ना बहुत प्रिय हो, और आप लेखकों द्वारा दिए गए पवित्रशास्त्र के सभी संदर्भों को ध्यान से पढ़ते हों। या आप सदैव अपनी बाइबल कलीसिया में साथ ले जाते हों और उपदेशक द्वारा अपने उपदेश में उल्लिखित प्रत्येक आयत को परिश्रम से खोजते हों। यद्यपि आपके प्रयास प्रशंसनीय हैं, फिर भी आप बाइबल को नहीं पढ़ रहे हैं। आप उन अंशों को पढ़ रहे हैं जिन्हें प्रस्तुतकर्ता ने पुस्तक या उपदेश में अपनी बात के समर्थन के लिए चुना है। और जब तक आप उस

परिस्थिति या प्रसंग से परिचित नहीं हैं जिसमें वे अलग-अलग आयतें आती हैं, तब तक आप निश्चय नहीं कर सकते कि वक्ता या लेखक की व्याख्या सही है। यदि आपने स्वयं बाइबल पढ़कर उससे परिचय प्राप्त नहीं किया है, तो उस व्याख्या की जाँच करने के लिए आपको प्रसंग के विषय में पर्याप्त जानकारी नहीं है।

प्रसंग में पढ़ना।

विशिष्ट अंशों की सही व्याख्या करने के लिए हमें प्रसंग पर विचार करना चाहिए। प्रसंग का अर्थ केवल किसी विशेष आयत के ठीक पहले और बाद में आने वाले शब्दों को पढ़ना ही नहीं है, यद्यपि वह निश्चय ही महत्वपूर्ण है। बाइबल के अंशों का एक ऐतिहासिक प्रसंग भी होता है, जो उनके अर्थ को समझाने में सहायता करता है।

- बाइबल की हर बात किसी व्यक्ति ने किसी दूसरे व्यक्ति से किसी विषय के बारे में लिखी या कही।
- जिस प्रकार हम वास्तविक विषयों के बारे में जानकारी पहुँचाने के उद्देश्य से दूसरों से बोलते या लिखते हैं, उसी प्रकार बाइबल के लेखकों ने भी किया।
- बाइबल के अंशों की सही व्याख्या करने के लिए हमें यह जानना आवश्यक है कि कौन किसको लिख या बोल रहा है और किस विषय के बारे में।

आप सोच सकते हैं, “मैं इन तीन बातों को भला कैसे जान सकता हूँ?” पहले, इन प्रश्नों के उत्तर प्रायः पाठ में ही मिल जाते हैं। इसी कारण आपको अनायास चुनी हुई आयतों से अधिक पढ़ना चाहिए। नियमित और क्रमबद्ध पठन आपको प्रसंग को समझने में सहायता देता है, क्योंकि उसमें आप केवल अलग-थलग आयतें नहीं, बल्कि पूरी पुस्तकें पढ़ते हैं। दूसरे, एक अच्छा बाइबल शिक्षक—जिसने पवित्रशास्त्र का व्यापक अध्ययन किया हो और जो ऐतिहासिक प्रसंग के महत्व को समझता हो—इन प्रश्नों के उत्तर पाने में आपकी सहायता कर सकता है।

इसका मेरे लिए क्या अर्थ है?

हममें से बहुत अधिक लोगों की प्रवृत्ति है कि हम बाइबल के पास इस दृष्टिकोण से आते हैं, “इसका मेरे लिए क्या अर्थ है?” वास्तव में, यह महत्वपूर्ण नहीं है कि उसका आपके लिए क्या अर्थ है। महत्वपूर्ण यह है कि पवित्र आत्मा की प्रेरणा के अधीन लेखक ने जब शब्दों को कागज़ पर लिखा, तब वह क्या कहना चाहता था। पवित्रशास्त्र की आयतों का हमारे लिए वह अर्थ नहीं हो सकता जो उन लोगों के लिए नहीं था जिनके लिए वे मूल रूप से लिखी गई थीं। निश्चय ही बाइबल में ऐसे कालातीत सत्य और सिद्धांत हैं जिन्हें हममें से प्रत्येक अपने जीवन में लागू कर सकता है, चाहे हमारा जन्म कब और कहाँ हुआ हो। किन्तु ऐतिहासिक प्रसंग को जानना—किसने किसको और क्यों लिखा—सटीक व्याख्या के लिए अत्यंत आवश्यक है।

प्रसंग पर विचार किए बिना हम बाइबल से ऐसी बातें कहलवा सकते हैं जो वह वास्तव में कहती ही नहीं। आइए, आयतों को उनके प्रसंग से अलग करके उनके अर्थ को बदल देने के दो उदाहरणों पर विचार करें। यदि आप कुछ समय से मसीही हैं, तो निःसंदेह आपने निम्न

दोनों आयतों को उपदेशों में प्रयुक्त होते सुना होगा। परन्तु यदि आप नियमित रूप से बाइबल नहीं पढ़ते, तो सम्भवतः आप इन गलत व्याख्याओं को पहचान नहीं पाए होंगे।

- “परमेश्वर विश्वासयोग्य है, और वह तुम्हें तुम्हारी सामर्थ्य से बढ़कर परीक्षा में नहीं पड़ने देगा; परन्तु परीक्षा के साथ वह निकल भागने का मार्ग भी देगा, ताकि तुम उसे सह सको” (1 कुरिन्थियों अध्याय 10 आयत 13, अंग्रेजी मानक संस्करण)। इस आयत का अक्सर यह कहने के लिए उपयोग किया जाता है कि परमेश्वर आपको आपकी सहने की सामर्थ्य से अधिक परीक्षाएँ और क्लेश नहीं देगा। परन्तु जब हम इस आयत को उसके प्रसंग में पढ़ते हैं, तो पाते हैं कि यह वास्तव में कहती है कि पाप करने का कोई भी प्रलोभन आपकी सहनशक्ति से बड़ा नहीं है, क्योंकि परमेश्वर सदा हमें उस पाप से निकल भागने का मार्ग देता है (1 कुरिन्थियों अध्याय 10 आयत 1 से 12)। इस आयत का हमारे जीवन में परमेश्वर द्वारा परीक्षाओं और क्लेशों को आने देने से कोई सम्बन्ध नहीं है। मैंने अपनी पुस्तक “परमेश्वर भला है और भले का अर्थ भला है” में पृष्ठ 8 और 9 पर इस आयत की अधिक गहन व्याख्या दी है।
- “दो, तो तुम्हें भी दिया जाएगा; अच्छा नाप, और उफनता हुआ, लोग तुम्हारी झोली में डालेंगे। क्योंकि जिस नाप से तुम नापते हो, उसी नाप से तुम्हारे लिए फिर नापा जाएगा” (लूका अध्याय 6 आयत 38, राजा जेम्स संस्करण)। सम्भव है कि आपने कलीसिया की आराधना-सभा में भेंट के समय लोगों को उदारता से देने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु इस आयत को उद्धृत होते सुना हो। परन्तु इस आयत का धन से कोई सम्बन्ध नहीं है। यीशु यह कह रहे थे कि दया और क्षमा के रूप में आप दूसरों को जो देते हैं, वही उसी मात्रा में आपके पास लौटकर आएगा (लूका अध्याय 6 आयत 27 से 38)।

मैं उन लोगों की निष्कपटता पर प्रश्न नहीं उठा रही जो इन आयतों को गलत समझते और उनका गलत उपयोग करते हैं। परन्तु मैं आपको नियमित और क्रमबद्ध बाइबल-पठन की आवश्यकता को पहचानने की चुनौती दे रही हूँ।



बाइबल को सफलतापूर्वक पढ़ने के लिए केवल यह जानना ही पर्याप्त नहीं है कि उसे कैसे पढ़ा जाए; आपको बाइबल के उद्देश्य को भी समझना चाहिए। यदि आप जानेंगे कि परमेश्वर की यह अद्भुत पुस्तक क्यों लिखी गई और इसे पढ़ने वालों के लिए यह क्या कार्य करती है, तो आप इससे और भी अधिक लाभ प्राप्त करेंगे। अगले अध्याय में हमारा विषय यही है।



यह सब किस विषय में है?

निष्कपट मसीही बाइबल को लेकर संघर्ष करते हैं, क्योंकि उसके उद्देश्य के विषय में उनकी धारणाएँ गलत होती हैं और इस बात को लेकर उनकी अपेक्षाएँ अवास्तविक होती हैं कि वह उनके लिए क्या कर सकती है और क्या नहीं कर सकती। हताश लोग कभी-कभी मुझसे ऐसी आयत देने के लिए कहते हैं जो उनके सामने उपस्थित किसी भी संकट का अन्त कर दे। परन्तु बाइबल जीवन की समस्याओं के त्वरित समाधानों का संग्रह नहीं है। न ही यह ऐसी आत्म-सहायता पुस्तक है जो हमें भरपूर जीवन जीने के लिए सामर्थी बनाने अथवा अर्थपूर्ण जीवन जीने के सिद्धान्त देने के लिए लिखी गई हो।

मैं यह नहीं कह रही कि बाइबल में दी गई जानकारी आपको बेहतर जीवन जीने में सहायता नहीं करेगी, परन्तु वह इसी उद्देश्य से नहीं लिखी गई थी। बाइबल सर्वशक्तिमान परमेश्वर और उसकी योजनाओं तथा उद्देश्यों को प्रकट करने के लिए लिखी गई थी। यह छियासठ पुस्तकों और पत्रों का संग्रह है, जो परमेश्वर की एक परिवार पाने की अभिलाषा और यीशु मसीह के द्वारा उस परिवार को प्राप्त करने की उसकी रीति को प्रकट करता है। बाइबल का प्रत्येक लेख किसी न किसी प्रकार से इस कथा में कुछ जोड़ता है अथवा उसे आगे बढ़ाता है।

योजना आरम्भ हुई, बाधित हुई, पुनः स्थापित हुई।

बाइबल का आरम्भ सृष्टि से होता है। सर्वशक्तिमान परमेश्वर ने पुरुषों और स्त्रियों को अपने पुत्र और पुत्रियाँ बनने के लिए सृजा, और उसने पृथ्वी को अपने तथा अपने परिवार के लिए एक घर के रूप में बनाया (उत्पत्ति अध्याय 1 से 2; इफिसियों अध्याय 1 आयत 4 से 5; यशायाह अध्याय 45 आयत 18)। कथा शीघ्र ही मनुष्य के पतन तक पहुँचती है, जब पहले मनुष्य, आदम ने पाप के द्वारा परमेश्वर से स्वतंत्र रहने को चुना। मानव जाति के मुखिया

और पृथ्वी के पहले भण्डारी के रूप में, उसके विद्रोह के कार्य ने समस्त मानव जाति और परिवार के घर पर भ्रष्टता और मृत्यु का शाप ले आया (उत्पत्ति अध्याय 3 आयत 17 से 19; रोमियों अध्याय 5 आयत 12; रोमियों अध्याय 8 आयत 20)। मानवजाति पुत्रत्व पाने के योग्य न रही, और पाप के कारण पृथ्वी भ्रष्ट हो गई।

आदम की अवज्ञा के तुरन्त बाद, परमेश्वर ने आदम से—और आदम में समस्त मानवजाति से—प्रतिज्ञा की कि एक दिन एक उद्धारकर्ता, अर्थात् छुड़ाने वाला, पृथ्वी पर आएगा और हुई क्षति को मिटा देगा (उत्पत्ति अध्याय 3 आयत 15)। यीशु ही वह उद्धारकर्ता हैं। इसके पश्चात् परमेश्वर ने मनुष्यों को लिखित अभिलेख रखने का निर्देश दिया, जैसे-जैसे वह यीशु के द्वारा अपने परिवार को पुनः प्राप्त करने की अपनी योजना के विभिन्न पहलुओं को और अधिक प्रकट करता गया। वे आरम्भिक अभिलेख विकसित होकर उस ग्रन्थ-संग्रह में बदल गए जिसे अब पुराना नियम कहा जाता है।

बाइबल के आरम्भिक लेख में प्रभु ने उस जनसमूह को प्रकट किया जिसके माध्यम से यीशु इस संसार में आने वाले थे—अर्थात् अब्राहम नामक व्यक्ति के वंशजों को (उत्पत्ति अध्याय 12 आयत 1 से 3)। उसका वंश आगे चलकर इस्राएल जाति बना, जिसे इब्रानी और यहूदी भी कहा जाता है। पुराने नियम का शेष भाग मुख्यतः इन लोगों का वह इतिहास है जो यीशु के जन्म से चार सौ वर्ष पहले तक का है (1921 ईसा पूर्व से 400 ईसा पूर्व)। यह इस बात का लेखा है कि परमेश्वर ने भीषण बाधाओं के बीच अब्राहम के वंशजों को कैसे सुरक्षित रखा, जब वह अपनी योजना और आने वाले उद्धारकर्ता के विषय में क्रमशः अधिक जानकारी देता गया। नया नियम यीशु के आगमन और उनके कार्य का लेखा है। इसकी सभी पुस्तकें और पत्र उन पुरुषों ने लिखे जिन्होंने यीशु मसीह की सेवकाई, क्रूसीकरण और पुनरुत्थान को निकट से देखा था। इन पुरुषों के विषय में मैं आगे के एक अध्याय में और बात करूँगी।

उद्धार के लिए बुद्धिमान।

प्रभु ने मनुष्यों को पवित्रशास्त्र लिखने की प्रेरणा दी, ताकि हम समझ सकें कि हमें पाप से उद्धार की आवश्यकता क्यों है, परमेश्वर यह उद्धार कैसे उपलब्ध कराता है और इसका हमारे जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है। यीशु इस संसार में आए कि क्रूस पर वे पाप के कारण मानवजाति के लिए ठहराया गया दण्ड स्वयं पर ले लें। अपनी मृत्यु और पुनरुत्थान के द्वारा यीशु ने उन सबके लिए, जो उन पर विश्वास करते हैं, परमेश्वर के पुत्र और पुत्रियाँ बनने का मार्ग खोल दिया। यीशु पर विश्वास करने का अर्थ है उन्हें अपना उद्धारकर्ता और प्रभु मानना, और पाप से उद्धार के एकमात्र स्रोत के रूप में उन पर भरोसा रखना।

“[पवित्रशास्त्र] तुम्हें शिक्षा देने और उस उद्धार की समझ देने में समर्थ हैं जो मसीह यीशु पर विश्वास के द्वारा प्राप्त होता है” (2 तीमोथियुस अध्याय 3 आयत 15)।

“परन्तु ये [पवित्रशास्त्र] इसलिए लिखे गए हैं कि तुम विश्वास करो कि यीशु ही मसीह [उद्धारकर्ता], परमेश्वर के पुत्र हैं, और उन पर विश्वास करने से तुम्हें जीवन प्राप्त हो” (यूहन्ना अध्याय 20 आयत 31)।

परमेश्वर का वचन हमें केवल उद्धार के विषय में जानकारी ही नहीं देता; यह हमारे जीवन में उद्धार उत्पन्न होने के लिए अत्यावश्यक भी है। जब हमारे सामने परमेश्वर का वचन इस सत्य के विषय में प्रस्तुत किया जाता है कि यीशु हमारे पापों के लिए मरे और मृतकों में से जी उठे, और हम उस पर विश्वास करते हैं, तब हम उद्धार के उस प्रबन्ध का अनुभव करते हैं। हम अनन्त जीवन पाते हैं। हमारे भीतर एक अलौकिक रूपान्तरण घटित होता है। पवित्र आत्मा, परमेश्वर के वचन के द्वारा, हमारे अन्तरतम में अनन्त जीवन प्रदान करता है, और हम सचमुच परमेश्वर से जन्म लेते हैं। हम पापियों से बदलकर परमेश्वर के पवित्र और धर्मी पुत्र और पुत्रियाँ बन जाते हैं (यूहन्ना अध्याय 3 आयत 3 से 5; 1 पतरस अध्याय 1 आयत 23; 1 यूहन्ना अध्याय 5 आयत 1)।

“परन्तु जितनों ने विश्वास किया... और [यीशु] को ग्रहण किया, उन्हें उसने परमेश्वर की सन्तान बनने का अधिकार दिया। उनका नया जन्म होता है! यह मनुष्य की अभिलाषा या योजना से उत्पन्न शारीरिक जन्म नहीं है—यह नया जन्म परमेश्वर से होता है” (यूहन्ना अध्याय 1 आयत 12 से 13)।

पवित्रशास्त्र आपको आपका सच्चा उद्देश्य दिखाता है—मसीह पर विश्वास के द्वारा परमेश्वर का पुत्र या पुत्री बनना। और परमेश्वर का वचन आपको आश्वस्त करता है कि आपकी सबसे बड़ी आवश्यकता पूरी हो चुकी है—पाप से उद्धार।

परन्तु मुझे वास्तविक सहायता चाहिए।

सम्भवतः आप सोच रहे हैं, “यह सब ठीक है, परन्तु मेरी वास्तविक समस्याएँ हैं और मुझे अभी वास्तविक सहायता चाहिए।” यह वास्तविक सहायता ही है! देखिए, बहुत से निष्कपट मसीहियों को जीवन के तूफानों में परमेश्वर पर भरोसा करने में कठिनाई होती है, क्योंकि वे निश्चय नहीं कर पाते कि वह उनकी सहायता करने को इच्छुक है। असंख्य विश्वासी इन सन्देहों से संघर्ष करते हैं: “मैंने बहुत बुरे काम किए हैं।” “परमेश्वर मुझसे उतना प्रेम नहीं करता जितना वह दूसरों से करता है।” परन्तु जब आप यह जानते हैं कि परमेश्वर आपकी सबसे बड़ी आवश्यकता—पाप से उद्धार—पहले ही पूरी कर चुका है, तो यह विश्वास को अत्यन्त बढ़ाता है। जब आप उसके परिवार का भाग भी नहीं थे, तब यदि प्रभु ने आपकी

सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता में सहायता की, तो अब जब आप उसके पुत्र या पुत्री हैं, वह छोटी बातों में आपकी सहायता करने को अनिच्छुक क्यों होगा? और अनन्त उद्धार की तुलना में बाकी सब कुछ छोटी बात ही है।

“जिसने अपने ही पुत्र को न रोका, वरन् उसे हम सब के लिए दे दिया—क्या हम ऐसे परमेश्वर पर यह भरोसा नहीं कर सकते कि वह अपने पुत्र के साथ हमें वह सब भी देगा जिसकी हमें आवश्यकता हो सकती है?” (रोमियों अध्याय 8 आयत 32, जे. बी. फिलिप्स अनुवाद)।

नए नियम का नियमित और क्रमबद्ध पठन आपके भीतर यह दृढ़ विश्वास उत्पन्न करेगा कि परमेश्वर आपसे प्रेम करता है और वह आपकी सहायता करेगा। जैसे-जैसे आप नए नियम से परिचित होते जाते हैं, आप यह देखने लगते हैं कि परमेश्वर ने उद्धार के द्वारा आपके लिए इस जीवन में और आने वाले जीवन में क्या-क्या उपलब्ध कराया है। और आप यह सीखते हैं कि आपके सामने कैसी भी परिस्थितियाँ क्यों न हों, इस प्रबन्ध में कैसे चलना और इसका अनुभव कैसे करना है।



बाइबल में आपके लिए वास्तविक सहायता है। परमेश्वर का वचन न केवल आपको आपका सच्चा उद्देश्य दिखाता और यह आश्वासन देता है कि आपकी सबसे बड़ी आवश्यकता पूरी हो चुकी है, बल्कि यह आपको बातों को वैसा देखने में भी सहायता देता है जैसी वे वास्तव में हैं। जब आप वास्तविकता को उसके सत्य रूप में देखना सीखते हैं, तब आपके सामने आने वाली किसी भी परिस्थिति का सामना कर सकते हैं। बाइबल वास्तविकता के विषय में क्या प्रकट करती है? आइए, अगले भाग में इस प्रश्न का उत्तर दें।



आप जिस प्रकार देखते हैं, उसी प्रकार समझते हैं।

जीवन के तूफान अपने आप में लोगों को नष्ट नहीं करते। यदि वे ऐसा करते, तो हममें से कोई भी बच न पाता, क्योंकि हम सभी कठिन समयों से होकर गुजरते हैं। कठिन समयों में आपकी प्रतिक्रिया ही यह निर्धारित करती है कि आप उनसे पार निकलेंगे या नहीं। आपकी प्रतिक्रिया वास्तविकता के विषय में आपकी समझ, अर्थात् अपनी परिस्थिति को देखने के ढंग से उत्पन्न होती है। जो कुछ आप देखते हैं, वह आपको नहीं बनाता या तोड़ता; बल्कि यह है कि आप देखी हुई बात को किस प्रकार देखते हैं। यही आपका दृष्टिकोण है। यदि आप परमेश्वर के अनुसार अपनी परिस्थितियों को उनके वास्तविक स्वरूप में देखना सीख लें, तो आप उस प्रचण्ड आक्रमण से बच निकलेंगे।

बातें वास्तव में जैसी हैं।

जब कोई तूफान आता है, तब जो आप देखते और अनुभव करते हैं, वह वास्तविक होता है। फिर भी आपकी दृष्टि और भावनाएँ आपकी परिस्थिति के सारे तथ्य आपको नहीं बता सकतीं, क्योंकि उससे कहीं अधिक घटित हो रहा होता है जितना आप अपनी इन्द्रियों से जान पाते हैं। बाइबल के अनुसार, एक अदृश्य लोक है, एक ऐसा आयाम जो सामान्यतः मनुष्यों को दिखाई नहीं देता। अदृश्य परमेश्वर सामर्थ्य और प्रबन्ध से परिपूर्ण एक अदृश्य राज्य पर प्रभुता करता है, जो हमारे भौतिक संसार को प्रभावित कर सकता है और करता भी है (कुलुस्सियों अध्याय 1 आयत 15 से 16; 2 कुरिन्थियों अध्याय 4 आयत 18)। इस समय परिस्थितियाँ चाहे जैसी दिखाई दें या महसूस हों, वास्तविकता यह है—सर्वशक्तिमान परमेश्वर

आपके साथ है, और आपके विरुद्ध ऐसी कोई बात नहीं आ सकती जो उससे बड़ी हो। बाइबल प्रकट करती है कि:

- परमेश्वर सर्वव्यापी है, अर्थात् वह एक ही समय में हर स्थान पर उपस्थित है। ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ परमेश्वर न हो। इसका अर्थ है कि आप जहाँ कहीं भी हों, वह वहीं है (यिर्मयाह अध्याय 23 आयत 23 से 24)।
- परमेश्वर सर्वशक्तिमान है, अर्थात् वह सम्पूर्ण सामर्थ्य से युक्त है। उससे बड़ा या अधिक शक्तिशाली कुछ नहीं है, और उसकी शक्ति तथा पराक्रम के सामने कुछ भी ठहर नहीं सकता (प्रकाशितवाक्य अध्याय 19 आयत 6)।
- परमेश्वर सर्वज्ञ है, अर्थात् वह सब कुछ जानता है। वह होने से पहले ही जानता है कि क्या होने वाला है। इसका अर्थ है कि कोई बात उसे अचानक चकित नहीं करती या उसे उलझन में नहीं डालती। ऐसी कोई समस्या नहीं जिसके लिए उसके पास पहले से कोई योजना या समाधान न हो (यशायाह अध्याय 46 आयत 9 से 10)।

सर्वशक्तिमान परमेश्वर न केवल आपके साथ है, वह आपके पक्ष में भी है। और प्रभु आपकी ओर से अपनी महानता प्रदर्शित करने को इच्छुक है। उसने आपके पापों के लिए यीशु को मरने के लिए भेजकर यह सिद्ध कर दिया। परमेश्वर ने यीशु मसीह के द्वारा हमारे लिए जो किया है, उसके प्रसंग में प्रेरित पौलुस ने एक अलंकारिक प्रश्न पूछा, “यदि परमेश्वर हमारे पक्ष में है, तो कौन [या क्या] हमारे विरोध में हो सकता है?” (रोमियों अध्याय 8 आयत 31, राजा जेम्स संस्करण)। पौलुस ने इस प्रश्न का प्रयोग प्रभाव डालने के लिए किया, क्योंकि इसका उत्तर स्पष्ट है। यदि पाप के कारण आप उसके शत्रु थे तब परमेश्वर ने स्वेच्छा से यीशु को आपके लिए मरने के लिए भेजा, तो अब जब आप क्रूस के द्वारा उसके साथ मेल-मिलाप कर चुके हैं, वह आपकी सहायता करने को अनिच्छुक क्यों होगा? (रोमियों अध्याय 5 आयत 6 से 10)।

बाइबल का नियमित और क्रमबद्ध पठन आपको वास्तविकता की अधिक सही समझ देता है। इसके पृष्ठों के द्वारा आप बातों को उनके वास्तविक स्वरूप में देखना आरम्भ करते हैं—परमेश्वर आपके साथ है और आपके पक्ष में है, तथा आपकी सहायता करने के लिए तैयार और इच्छुक है। “परमेश्वर हमारा शक्तिशाली गढ़ है, और संकट के समय सदा सहायता करने को तैयार रहता है” (भजन संहिता अध्याय 46 आयत 1, समकालीन अंग्रेज़ी संस्करण)। परमेश्वर का वचन आपको इस बात का दृढ़ विश्वास दिलाता है कि आपके विरुद्ध ऐसी कोई बात नहीं आ सकती जो उससे बड़ी हो। यह नया दृष्टिकोण आपको अपनी परिस्थितियों में विश्वास और प्रभु पर भरोसे के साथ प्रतिक्रिया करने योग्य बनाता है, और इस प्रकार उसकी सहायता और प्रबन्ध का द्वार खुलता है।

वास्तविक जीवन का एक उदाहरण।

पुराने नियम में हमारे लिए सुरक्षित रखे गए ऐतिहासिक वृत्तान्त से एक उदाहरण पर विचार कीजिए। वास्तविक जीवन की यह घटना दिखाती है कि वास्तविकता के विषय में हमारा दृष्टिकोण किसी तूफान का सामना करते समय हमारे कार्यों को कैसे प्रभावित करता है। यह वास्तविक लोगों का सच्चा वृत्तान्त है, जिन्होंने एक गंभीर समस्या का सामना किया; और वास्तविकता के विषय में अपने दृष्टिकोण तथा उसके बाद किए गए अपने कार्यों के कारण, उनमें से कुछ को सर्वशक्तिमान परमेश्वर से सहायता मिली, जबकि दूसरों को नहीं मिली।

लगभग 1490 ईसा पूर्व, अब्राहम के वंशज, अर्थात् यहूदी अथवा इस्राएली, कनान की सीमा पर पहुँचे, जो वर्तमान इस्राएल है। वे अभी हाल ही में मिस्र से निकले थे, जहाँ वे अनेक वर्षों तक दासों के रूप में श्रम करते रहे थे। प्रभु ने अपनी सामर्थ्य के अनेक महान प्रदर्शनों के द्वारा उन्हें उस बन्धन से छुड़ाया। फिर मूसा नामक व्यक्ति के नेतृत्व में इस्राएली अपने पैतृक देश में लौट आए।

इस्राएलियों के सीमा पार करने से पहले, मूसा ने टोह लेने के उद्देश्य से बारह भेदियों को कनान भेजा। चालीस दिन की अन्वेषण-यात्रा के बाद वे अपने वृत्तान्त के साथ लौटे। कनान भरपूर प्रबन्ध से युक्त एक सुन्दर देश था। परन्तु वहाँ भयंकर बाधाएँ भी थीं—चारदीवारी से घिरे नगर, युद्धप्रिय गोत्र और असाधारण रूप से विशालकाय लोग। यद्यपि सभी भेदी अपने वृत्तान्त पर सहमत थे, फिर भी आगे क्या करना चाहिए, इस विषय में उनके विचार बहुत भिन्न थे। दो भेदियों, यहोशू और कालेब ने निष्कर्ष निकाला कि बाधाओं के बावजूद उन्हें उस देश में प्रवेश करके उसे जीत लेना चाहिए। अन्य दस इस बात को लेकर निश्चित थे कि यदि वे कनान पर अधिकार करने का प्रयास करेंगे, तो वे सभी मर जाएँगे।

“[यहोशू ने कहा,] ‘[प्रभु] हमें सुरक्षित रूप से उस देश में ले जाएगा और उसे हमें दे देगा... प्रभु के विरुद्ध विद्रोह न करो और उस देश के लोगों से मत डरो। वे हमारे लिए केवल असहाय शिकार हैं! उनके पास कोई सुरक्षा नहीं है, परन्तु प्रभु हमारे साथ है! उनसे मत डरो!’” (गिनती अध्याय 14 आयत 8 से 9)।

“[कालेब ने कहा,] ‘आओ, हम तुरन्त उस देश पर अधिकार करने के लिए चलें,’ उसने कहा। ‘हम उसे निश्चय ही जीत सकते हैं।’” (गिनती अध्याय 13 आयत 30)।

“बाकी दस ने कहा, ‘हम उन लोगों के विरुद्ध नहीं जा सकते जो उस देश में रहते हैं! वे हमसे अधिक बलवान हैं... जिस देश का हमने पता लगाया है, वह वहाँ रहने वालों को निगल जाता है। वहाँ हमने जितने भी लोगों को देखा, वे सब बहुत बड़े कद के थे। हमने वहाँ दानवों को भी देखा, अर्थात् अनाक के वंशजों को। हमें तो अपने आप को उनके सामने टिड्डियों के

समान महसूस हुआ, और उनकी दृष्टि में भी हम ऐसे ही दिखाई देते थे” (गिनती अध्याय 13 आयत 31 से 33)।

ये दोनों बिल्कुल भिन्न निष्कर्ष इस बात से उत्पन्न हुए कि प्रत्येक भेदिये ने अपने सामने उपस्थित परिस्थितियों को किस दृष्टि से देखा। उन दस भेदियों ने परिस्थिति का मूल्यांकन केवल उसी आधार पर किया जो उनकी आँखों को दिखाई दे रहा था। परन्तु यहोशू और कालेब ने उसका आकलन उन अदृश्य सच्चाइयों के आधार पर किया। यद्यपि वे सर्वशक्तिमान परमेश्वर को अपनी आँखों से नहीं देख सकते थे, फिर भी वे विश्वास करते थे कि वह उनके साथ है और उनकी सहायता करेगा। कालेब और यहोशू को यह विश्वास स्वयं प्रभु से मिला था, जब उसने मूसा को इस्राएल को मिस्र से बाहर निकालने के लिए बुलाया था। प्रभु परमेश्वर ने मूसा से प्रतिज्ञा की थी कि वह न केवल इस्राएल को मिस्र की दासता से छुड़ाएगा, बल्कि उन्हें सुरक्षित रूप से कनान देश में भी पहुँचाएगा (निर्गमन अध्याय 3 आयत 8; निर्गमन अध्याय 6 आयत 6 से 8)।

जब उन बारह भेदियों ने अपनी-अपनी रिपोर्ट पूरे इस्राएली समुदाय के सामने प्रस्तुत की, तब सारी प्रजा ने उस देश में प्रवेश करने का प्रयास न करने का निर्णय लिया। यद्यपि प्रभु उनके साथ था और उनके लिए युद्ध करने को तैयार था, फिर भी उन्होंने स्वयं को असहाय समझा। उस देश में प्रवेश करने के स्थान पर, उस पूरी पीढ़ी ने अगले चालीस वर्ष मिस्र और कनान के बीच स्थित जंगल में भटकते हुए बिताए। उनकी पराजय कनान के लोगों के कारण नहीं हुई, बल्कि इस कारण हुई कि उन्होंने अपनी परिस्थिति को किस प्रकार देखा। इस्राएलियों को तूफान ने नहीं हराया; उन्हें उनकी वास्तविकता के प्रति उनकी अपनी धारणा ने पराजित किया। बीस लाख से भी अधिक लोगों में से अन्ततः केवल कालेब और यहोशू ही उस देश में जाकर बस सके जिसकी प्रतिज्ञा परमेश्वर ने उनसे की थी।

यहोशू और कालेब अलग क्यों थे?

यहोशू और कालेब इसलिए अलग थे क्योंकि परमेश्वर के वचन ने उनकी सोच और उनकी दृष्टि को आकार दिया था। उन्होंने अपनी परिस्थितियों को उसी दृष्टिकोण से देखा, और उसी के अनुसार तूफान का सामना किया। इतिहास हमें यह नहीं बताता कि यहोशू और कालेब ने वास्तविकता के प्रति ऐसी दृष्टि किस प्रकार विकसित की। फिर भी, हमें इसका एक संकेत उस बात से मिलता है जो प्रभु ने स्वयं यहोशू से कही थी।

जब जंगल में भटकने के चालीस वर्ष पूरे हो गए और कनान देश में फिर से प्रवेश करने का समय आया, तब परमेश्वर ने अगली पीढ़ी के इस्राएलियों का नेतृत्व करने के लिए यहोशू को चुना। उस समय भी कनान ऐसा देश था जहाँ भय उत्पन्न करने वाले शक्तिशाली शत्रु बसे हुए थे। परन्तु परमेश्वर ने यहोशू से प्रतिज्ञा की कि यदि वह पवित्रशास्त्र पर मनन करेगा, तो वह उस देश को जीतने में सफल होगा। मनन करने का अर्थ है—अपने विचारों को किसी बात पर केन्द्रित करना, उस पर गहराई से विचार करना और बार-बार उसका चिंतन करना।

“बलवन्त और हियाव बाँध... उन सब व्यवस्थाओं के अनुसार चलना जिनकी आज्ञा मेरे दास मूसा ने तुझे दी है। उनसे न तो दाहिने मुड़ना और न बाएँ, ताकि जहाँ कहीं तू जाए वहाँ सफलता पाए। व्यवस्था की यह पुस्तक तेरे मुँह से कभी अलग न होने पाए, वरन् दिन-रात उसी पर मनन करना, ताकि जो कुछ उसमें लिखा है उसके अनुसार करने की सावधानी रखे; क्योंकि तब तू अपने मार्ग में सफल होगा और तभी तेरा कार्य सिद्ध होगा।” (यहोशू अध्याय 1 आयत 6 से 8)

जब परमेश्वर ने यह बातें यहोशू से कहीं, उस समय बाइबल को व्यवस्था की पुस्तक के नाम से जाना जाता था। उस समय उसमें केवल वे पाँच पुस्तकें थीं जिन्हें मूसा ने इस्राएलियों के जंगल में भटकने के दौरान लिखा था। मूसा के बाद दूसरे प्रमुख होने के कारण यहोशू ने निस्संदेह मूसा के साथ बैठकर इन लेखों का बार-बार अध्ययन किया होगा। उनमें सर्वशक्तिमान परमेश्वर की स्पष्ट आज्ञाएँ थीं, साथ ही उस समय तक के इस्राएल के इतिहास का भी वर्णन था। वास्तविकता के प्रति यहोशू की दृष्टि उस प्रतिज्ञा से निर्मित हुई थी जिसे प्रभु ने बार-बार दोहराया था कि जो लोग उस पर भरोसा रखते हैं और उसकी आज्ञा मानते हैं, उन्हें वह अवश्य छुड़ाता है। इसके अतिरिक्त, इतिहास में अनेक ऐसे उदाहरण भी थे जहाँ परमेश्वर ने अपने लोगों को उनके शत्रुओं पर विजय प्रदान की थी।

यहोशू और कालेब प्रभु के वचनों की सत्यता के प्रति इतने दृढ़ विश्वास से भर गए थे कि जब उनकी आँखों से दिखाई देने वाली बातें और उनकी भावनाएँ भी पवित्रशास्त्र के विपरीत प्रतीत होती थीं, तब भी उन्होंने परमेश्वर का ही पक्ष लिया। परमेश्वर की व्यवस्था उनके विचारों पर इस प्रकार प्रभुत्व रखती थी कि उसी ने यह निर्धारित किया कि वे अपनी परिस्थितियों का सामना कैसे करेंगे। उनकी प्रतिक्रिया कोई ऐसा सूत्र या तकनीक नहीं थी जिसे सही प्रकार से अपनाने पर कठिनाइयाँ समाप्त हो जातीं। वह तो उनकी दृष्टि थी। इन दोनों पुरुषों ने परिस्थितियों को वैसे देखा जैसे वे वास्तव में परमेश्वर की दृष्टि में थीं, और इसी कारण वे कितनी भी भयावह परिस्थितियों से विचलित नहीं हुए।



नियमित रूप से नए नियम का अध्ययन करने से आपकी दृष्टि बदल जाएगी। तब आप जीवन का सामना इस समझ के साथ करेंगे कि ऐसी कोई भी परिस्थिति आपके विरुद्ध नहीं आ सकती जो परमेश्वर से बड़ी हो, क्योंकि वही परमेश्वर आपके साथ है और आपके पक्ष में है। और तब, यहोशू और कालेब की तरह, आप भी हर तूफान का सामना विश्वास और प्रभु पर भरोसा रखते हुए करेंगे।



पूर्णतः दृढ़ विश्वास।

इस्राएलियों द्वारा कनान देश में प्रवेश करने से इनकार करने के चालीस वर्ष बाद, उनकी सन्तानों ने परमेश्वर के वचन पर विश्वास किया और सीमा पार करके उस देश में प्रवेश किया। वहाँ अनेक बाधाएँ होने पर भी परमेश्वर ने उन्हें सुरक्षित रूप से उस देश में बसाया। सर्वशक्तिमान परमेश्वर ने अपनी अनुग्रहपूर्ण सामर्थ्य को उनके विश्वास के द्वारा उनकी परिस्थितियों में कार्यरत किया। विश्वास कठिन परिस्थितियों में प्रभु की सामर्थ्य के लिए द्वार खोल देता है—वही सामर्थ्य जो दानवों को पराजित करती है, पर्वतों को हटा देती है और तूफानों को शांत कर देती है। आइए देखें कि इस्राएलियों के जीवन में यह कैसे प्रकट हुआ और हमारे जीवन में यह कैसा दिखाई देता है।

विश्वास के द्वारा विजय।

जब इस्राएलियों की यह नई पीढ़ी कनान की पहली बाधा, अर्थात् सुदृढ़ और ऊँची शहरपनाह वाले यरीहो नगर के सामने पहुँची, तब परमेश्वर ने यहोशू को ऐसी युद्ध-योजना दी जो देखने में बहुत असामान्य प्रतीत होती थी। प्रभु ने उससे कहा कि वह लोगों को आज्ञा दे कि वे छह दिनों तक प्रतिदिन एक बार नगर की परिक्रमा करें। सातवें दिन उन्हें नगर की सात बार परिक्रमा करनी थी, और उसके बाद सबको मिलकर ऊँचे स्वर से जयघोष करना था। तब नगर की शहरपनाह ढह जाएगी (यहोशू अध्याय 6 आयत 2 से 5)। इस्राएलियों ने वैसा ही किया जैसा परमेश्वर ने आज्ञा दी थी। शहरपनाह गिर गई और यरीहो पर विजय प्राप्त हुई। उनकी यह विजय उनकी अपनी सामर्थ्य से नहीं, बल्कि उनके विश्वास के द्वारा परमेश्वर की सामर्थ्य से हुई। “विश्वास ही से यरीहो की शहरपनाह, जब सात दिन तक उसकी परिक्रमा की गई, तो गिर पड़ी।” (इब्रानियों अध्याय 11 आयत 30)।

विश्वास शब्द यूनानी भाषा के एक शब्द से निकला है, जिसका अर्थ है दृढ़ विश्वास या अटल निश्चय। यहोशू और इस्राएली परमेश्वर के वचन के प्रति इतने आश्वस्त थे कि यद्यपि उनके पास उसकी पुष्टि करने के लिए कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं था, फिर भी उन्होंने वैसा ही किया जैसा परमेश्वर ने उन्हें करने की आज्ञा दी थी, और यरीहो पर विजय प्राप्त की। वे पुराने नियम के ऐसे अकेले लोग नहीं थे जिन्होंने विश्वास के द्वारा परमेश्वर की सामर्थ्य से विजय पाई। आइए उन अन्य लोगों के कार्यों पर भी ध्यान दें, जिन्होंने यहोशू और कालेब की तरह अपने जीवन के तूफानों का सामना करते समय परमेश्वर से वास्तविक सहायता प्राप्त की।

“अब मैं और क्या कहूँ? यदि मैं गिदोन, बाराक, शिमशोन, यिप्तह, दाऊद, शमूएल और अन्य भविष्यद्वक्ताओं के विश्वास की बातें सुनाने लगूँ, तो समय कम पड़ जाएगा। विश्वास ही के द्वारा उन्होंने राज्यों को जीत लिया, न्याय के साथ शासन किया, और परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं को प्राप्त किया।” (इब्रानियों अध्याय 11 आयत 32)

“उन्होंने सिंहों के मुँह बंद किए, प्रचण्ड आग की ज्वाला को बुझाया, तलवार की धार से बच निकले। उनकी निर्बलता सामर्थ्य में बदल गई। वे युद्ध में पराक्रमी बने और उन्होंने विदेशी सेनाओं को भागने पर विवश कर दिया। स्त्रियों ने अपने मरे हुए प्रियजनों को फिर जीवित पाया।” (इब्रानियों अध्याय 11 आयत 33 से 35)

गिड़गिड़ाने से कुछ प्राप्त नहीं होता।

अक्सर जब कठिनाइयाँ आती हैं, तो परमेश्वर के लोग उसके पास जाकर उससे सहायता की भीख माँगने लगते हैं। परन्तु प्रभु ऐसे लोगों की खोज नहीं करता जो गिड़गिड़ाएँ। वह ऐसे लोगों को ढूँढ़ता है जो विश्वास करें कि वह उनकी सहायता अवश्य करेगा। “क्योंकि यहोवा की दृष्टि सारी पृथ्वी पर लगी रहती है, ताकि जिनका मन उसकी ओर पूरी रीति से लगा रहता है, उनके लिए वह अपनी सामर्थ्य प्रकट करे।” (2 इतिहास अध्याय 16 आयत 9)।

जब हम इस आयत को उसके पूरे संदर्भ में पढ़ते हैं, तो हमें पता चलता है कि पूरी रीति से समर्पित मन वही है जो परमेश्वर पर भरोसा रखता है और उसके वचन पर विश्वास करता है। बाइबल का नियमित और व्यवस्थित अध्ययन आपके भीतर ऐसा विश्वास उत्पन्न करेगा जो तूफान कितना भी प्रचण्ड क्यों न हो, फिर भी परमेश्वर के वचन पर अटल बना रहेगा।

विश्वास और परमेश्वर का वचन।

यदि आप कुछ समय से मसीही हैं, तो सम्भव है कि आपने यह वचन अनेक बार सुना होगा: “अतः विश्वास सुनने से उत्पन्न होता है, और सुनना मसीह के वचन के द्वारा होता है।” (रोमियों अध्याय 10 आयत 17)।

विश्वास हमें परमेश्वर के वचन के द्वारा प्राप्त होता है, क्योंकि पवित्रशास्त्र सर्वशक्तिमान परमेश्वर को हमारे सामने प्रकट करता है। बाइबल हमें बताती है कि वह कैसा है और वह अपने लोगों के जीवन में किस प्रकार कार्य करता है। अपने लिखित वचन के माध्यम से प्रभु हमें अपनी सामर्थ्य, अपनी भलाई और अपनी विश्वासयोग्यता के विषय में आश्वस्त करता है। विश्वास, अर्थात् भरोसा, इस सत्य के प्रति हमारे हृदय की प्रतिक्रिया है। आपके भीतर कितना विश्वास है और परमेश्वर पर आपका भरोसा कितना दृढ़ है, यह सीधे-सीधे इस बात पर निर्भर करता है कि आप उसके वचन के द्वारा उसे कितना जानते हैं।

आप उस पर विश्वास नहीं कर सकते जिसे आप जानते ही नहीं। और यदि आप बाइबल को नियमित और व्यवस्थित रूप से नहीं पढ़ते, तो ऐसी बहुत-सी बातें हैं जिन्हें आप नहीं जानते। बाइबल में इकतीस हजार से भी अधिक आयतें हैं। यदि आपने उनमें से एक हजार आयतें पढ़ ली हों और सैकड़ों आयतें आपको कंठस्थ भी हों, तब भी लगभग तीस हजार आयतें ऐसी हैं जिनसे आप अभी भी अपरिचित हैं। इतना ही नहीं, जिन आयतों को आप जानते हैं, उनके संदर्भ की भी आपकी समझ बहुत सीमित हो सकती है।

“मैं परमेश्वर के वचन पर दृढ़ता से खड़ा हूँ...”

कभी-कभी मेरी भेंट ऐसे मसीहियों से होती है जो मुझसे कहते हैं कि वे किसी विशेष बात के लिए परमेश्वर पर विश्वास कर रहे हैं और उसके वचन पर दृढ़ता से खड़े हैं। उनका अर्थ यह होता है कि वे आशा कर रहे हैं कि परमेश्वर उनकी परिस्थिति में उनकी इच्छा के अनुसार कार्य करेगा। वे अपनी इस अपेक्षा का आधार किसी एक विशेष आयत को बनाते हैं, और फिर वही आयत मुझे सुनाते हैं। परन्तु अनेक बार, क्योंकि मैं वर्षों से नियमित रूप से बाइबल पढ़ता आया हूँ, मैं तुरंत समझ जाता हूँ कि उन्होंने उस आयत को उसके वास्तविक संदर्भ से पूरी तरह अलग कर दिया है और उसे अपनी परिस्थिति पर अनुचित रूप से लागू कर रहे हैं। परिणामस्वरूप वे परमेश्वर से ऐसी बात की अपेक्षा कर रहे होते हैं जिसकी उसने कभी प्रतिज्ञा ही नहीं की। इसलिए बहुत सम्भव है कि अन्त में उन्हें निराशा का सामना करना पड़े।

मसीही समाज में विजय पाने और जयवन्त होने के विषय में बहुत बातें कही जाती हैं। ऐसी बातें अपने आप में गलत नहीं हैं, क्योंकि बाइबल भी मसीही जीवन का वर्णन करने के लिए इन और ऐसे ही अनेक शब्दों का उपयोग करती है। परन्तु कुछ लोग इन बातों का गलत अर्थ निकालते हैं। वे सोचते हैं कि हम अपने जीवन से हर प्रकार की परेशानी को पूरी तरह दूर कर सकते हैं और अपने मार्ग में आने वाले हर पर्वत को हटा सकते हैं। परन्तु यह सत्य नहीं है। हम एक ऐसे संसार में रहते हैं जो पाप के कारण बिगड़ चुका है, और कठिनाइयाँ हम सबके जीवन में आती हैं। (यूहन्ना अध्याय 16 आयत 33)।

कुछ कठिनाइयों के पर्वत ऐसे होते हैं जिन्हें हटाया जा सकता है। कुछ से बचा जा सकता है। परन्तु कुछ ऐसे भी होते हैं जिन्हें आपको चढ़कर पार करना पड़ता है या जिनके बीच से मार्ग बनाकर निकलना पड़ता है। यदि आप ऐसे पर्वत को हटाने का प्रयास कर रहे हैं जिसे वास्तव में चढ़कर पार करना आवश्यक है, तो सम्भव है कि आपको वह सहायता न मिले जिसकी आप आशा कर रहे हैं, क्योंकि आप परमेश्वर से ऐसी बात करने की अपेक्षा कर रहे हैं जिसकी उसने प्रतिज्ञा नहीं की है। बाइबल का नियमित और व्यवस्थित अध्ययन आपको यह समझने की बुद्धि देता है कि किसी विशेष परिस्थिति का सामना कैसे करना है, और यह पहचानने में सहायता करता है कि कौन-से पर्वत हटाए जा सकते हैं और कौन-से नहीं।

“मुझे पता है कि मैंने यह आयत कहीं पढ़ी थी...”

कभी-कभी मेरी भेंट ऐसे लोगों से होती है जो किसी विषय के बारे में अपना विचार बताते हैं, और फिर कहते हैं कि उनकी बात का समर्थन करने वाली एक आयत बाइबल में है। वे यह भी स्वीकार करते हैं कि उन्हें यह याद नहीं कि वह आयत कहाँ लिखी है, और न ही उन्हें उसके शब्द ठीक-ठीक याद हैं। फिर भी वे पूरे विश्वास के साथ कहते हैं कि वह आयत कहीं-न-कहीं बाइबल में अवश्य है।

ऐसी स्थिति में मेरा मन उनसे यह पूछने का करता है: यदि उन्हें यह भी नहीं पता कि वह आयत कहाँ लिखी है, तो वे इतने निश्चित कैसे हो सकते हैं कि उसमें वही लिखा है जो वे समझ रहे हैं? यदि उनकी स्मृति गलत हो तो? यदि उन्होंने उस आयत को उसके वास्तविक संदर्भ से अलग करके समझ लिया हो तो? और यदि ऐसी कोई आयत बाइबल में है ही नहीं तो? दुर्भाग्य से, अनेक बार ऐसा ही होता है। तब वे अपने विश्वास की नींव ऐसी बात पर रख रहे होते हैं जिसे परमेश्वर ने कभी कहा ही नहीं।

मैं समझती हूँ कि हम सबके साथ ऐसा होता है कि हम कोई अंश पढ़ते हैं और बाद में भूल जाते हैं कि वह कहाँ लिखा था। परन्तु यदि आप बाइबल को नियमित और व्यवस्थित रूप से पढ़ते हैं, तो उस आयत को फिर से खोज लेने की सम्भावना कहीं अधिक होती है। आप

अपनी खोज को सीमित कर सकते हैं, क्योंकि आपको याद रहता है कि हाल के दिनों में आप बाइबल के किन भागों का अध्ययन कर रहे थे। और जैसे-जैसे आप नए नियम से अधिक परिचित होते जाते हैं, वैसे-वैसे आपको यह सामान्य समझ भी होने लगती है कि कौन-सी आयतें लगभग कहाँ मिलेंगी।

“मैंने मसीही टेलीविजन पर एक गवाही सुनी...”

जीवन की कठिनाइयों का सामना करते समय, सहायता और राहत पाने के हमारे बहुत-से प्रयास इस बात पर आधारित होते हैं कि किसी दूसरे व्यक्ति ने क्या अनुभव किया, न कि इस पर कि परमेश्वर ने स्वयं अपने वचन में क्या कहा है। हम किसी व्यक्ति को यह बताते हुए सुनते हैं कि उसने अपनी कठिन परिस्थिति में क्या किया और उसे उससे कैसे लाभ मिला। तब हम भी वही करने लगते हैं। परन्तु यह विश्वास नहीं है। हम केवल किसी दूसरे व्यक्ति के व्यवहार की नकल कर रहे होते हैं।

गवाहियों से प्रेरणा लेना गलत नहीं है, परन्तु वे उस विश्वास का स्थान कभी नहीं ले सकतीं जो परमेश्वर के वचन को पढ़ने से उत्पन्न होता है।

विश्वास निश्चिन्त और अटल होता है।

जब हम बाइबल के वृत्तान्तों का अध्ययन करते हैं, तो हम देखते हैं कि जिन लोगों ने अपनी परिस्थितियों में परमेश्वर की सहायता प्राप्त की, उनका विश्वास पूरी तरह दृढ़ था। वे इस बात के प्रति पूर्णतः आश्वस्त थे कि परमेश्वर अपने वचन को अवश्य पूरा करेगा। उनकी परिस्थितियाँ और भी कठिन क्यों न हो गई हों, फिर भी वे कभी डगमगाए नहीं और न ही उन्होंने इस बात पर संदेह किया कि परमेश्वर उनकी सहायता करेगा।

इब्राहीम और सारा के यहाँ उस समय पुत्र उत्पन्न हुआ जब सारा बाँझ थी और दोनों ही सन्तान उत्पन्न करने की आयु से बहुत आगे निकल चुके थे। जब हम उनके जीवन का अध्ययन करते हैं, तो पाते हैं कि प्रभु ने उन्हें एक पुत्र देने की प्रतिज्ञा की थी और फिर बार-बार उसी प्रतिज्ञा को दोहराया, जब तक कि उनका विश्वास इतना दृढ़ नहीं हो गया कि उनके मन में कोई सन्देह शेष न रहा। परमेश्वर ने उनके लिए जो करने की प्रतिज्ञा की थी, उसे जानने से इब्राहीम और सारा के भीतर अटल भरोसा और निश्चिन्त विश्वास उत्पन्न हुआ।

“अविश्वास या संदेह ने उसे (इब्राहीम को) परमेश्वर की प्रतिज्ञा के विषय में न तो डगमगाने दिया और न ही संदेह करने दिया... वह इस बात से पूरी तरह आश्वस्त और निश्चिन्त था कि परमेश्वर अपने वचन को पूरा करने और जो उसने प्रतिज्ञा की है उसे करने में सामर्थी है।” (रोमियों अध्याय 4 आयत 20 से 22)

“विश्वास ही के द्वारा सारा ने भी, जो इब्राहीम की पत्नी थी, वृद्धावस्था बीत जाने पर भी गर्भ धारण करने की सामर्थ्य प्राप्त की, क्योंकि जिसने प्रतिज्ञा की थी, उसे उसने विश्वासयोग्य, भरोसेमंद और अपने वचन का सच्चा मान लिया।” (इब्रानियों अध्याय 11 आयत 11)

अक्सर ऐसा होता है कि मसीही लोग परमेश्वर से सहायता की आशा तो रखते हैं, परन्तु उनके पास वह दृढ़ विश्वास नहीं होता जो यह जानने से उत्पन्न होता है कि परमेश्वर ने उनकी परिस्थिति के विषय में क्या करने की प्रतिज्ञा की है और क्या करने की नहीं। प्रभु अपने लिखित वचन के द्वारा तूफानों के बीच भी अपनी इच्छा, अर्थात् वह क्या करना चाहता है, प्रकट करता है। सर्वशक्तिमान परमेश्वर हमें यह आश्वासन देता है कि जब हम उसकी इच्छा के अनुसार, जैसा कि बाइबल में प्रकट किया गया है, उससे सहायता माँगते हैं, तब वह हमारी सुनता है।

“और हमें उसके सामने यह भरोसा है कि यदि हम उसकी इच्छा के अनुसार कुछ भी माँगते हैं, तो वह हमारी सुनता है। और यदि हम जानते हैं कि वह हमारी सुनता है, तो जो कुछ भी हम उससे माँगते हैं, उसके विषय में यह भी जानते हैं कि जो हमने उससे माँगा है, वह हमें मिल गया है।” (1 यूहन्ना अध्याय 5 आयत 14 और 15)।

यद्यपि पवित्रशास्त्र हमारी प्रत्येक व्यक्तिगत परिस्थिति के विषय में विशेष विवरण नहीं देता, फिर भी वह ऐसे सामान्य सिद्धांतों और प्रतिज्ञाओं को अवश्य प्रदान करता है जो हमें यह विश्वास दिलाते हैं कि परमेश्वर किस प्रकार की सहायता देना चाहता है। परमेश्वर की इच्छा को पहचानना एक ऐसा विषय है जिस पर अलग से पूरी पुस्तक लिखी जा सकती है। यहाँ मेरा उद्देश्य केवल इतना बताना है कि सच्चा आत्मविश्वास इस बात को जानने से उत्पन्न होता है कि आपकी प्रार्थना परमेश्वर के लिखित वचन के अनुरूप है। परन्तु यदि आप यह नहीं जानते कि बाइबल क्या कहती है, तो आप इस बात के प्रति निश्चित नहीं हो सकते कि जो कुछ आप माँग रहे हैं, वह उसकी इच्छा के अनुसार है या नहीं। और जब जीवन के तूफान प्रचण्ड होकर चलने लगेंगे, तब आप अपने विश्वास में दृढ़ नहीं रह पाएँगे। वह विश्वास जो तूफानों के सामने भी अडिग बना रहता है, वही विश्वास है जो पूरी तरह आश्वस्त और दृढ़ निश्चय वाला होता है।

यदि आप निश्चित नहीं हैं, तो आप विश्वास नहीं कर सकते।

कठिन समय में हमारे विश्वास की निरन्तर परीक्षा होती रहती है। जब कठिन परिस्थितियाँ जल्दी नहीं बदलतीं, तब हमारे मन में पीड़ा देने वाले अनेक विचार उठने लगते हैं—“परमेश्वर ने अभी तक मेरी परिस्थिति में कार्य क्यों नहीं किया?” “यह क्यों काम नहीं कर रहा?” “मैं ऐसी कौन-सी गलती कर रहा हूँ?”

अक्सर प्रभु के नाम पर बोलने वाले अनेक लोग भी सामने आ जाते हैं। वे परमेश्वर की इच्छा के विषय में अलग-अलग विचार प्रस्तुत करते हैं और बताते हैं कि उत्तर पाने के लिए हमें क्या करना चाहिए या क्या नहीं करना चाहिए। और ऐसा प्रतीत होता है कि हर व्यक्ति के पास अपनी बात को सही सिद्ध करने के लिए बाइबल की कोई-न-कोई आयत भी होती है। दुःख और पीड़ा से गुज़र रहे लोग निराशा में इन अलग-अलग उपायों को अपनाने का प्रयास करते हैं, इस आशा में कि शायद इनमें से कोई एक उपाय उन्हें परिणाम दे देगा।

- “तुमने शैतान के लिए एक द्वार खुला छोड़ दिया था, इसलिए वह तुम्हारे जीवन में प्रवेश कर गया। इसी कारण तुम आज इस परेशानी में हो!”
- “तुम्हारे परिवार में पीढ़ी-दर-पीढ़ी चला आ रहा एक शाप है। जब तक उसकी पहचान करके उसे तोड़ा नहीं जाएगा, तब तक तुम्हें छुटकारा नहीं मिलेगा!”
- “तुमने दशमांश देने में चूक की थी और इस प्रकार अपने जीवन में घटी बोई। अब तुम वही काट रहे हो जो तुमने बोया था!”

इन सबमें से कौन सही है, यदि वास्तव में कोई सही है तो?

इसका निश्चित उत्तर जानने का केवल एक ही मार्ग है—स्वयं बाइबल पढ़ना। आप उस बात पर विश्वास नहीं कर सकते जिसे आप जानते ही नहीं, और यदि आप निश्चित नहीं हैं, तो आपके भीतर दृढ़ भरोसा भी नहीं हो सकता। परन्तु जब हम बाइबल को स्वयं पढ़ते हैं और जानते हैं कि परमेश्वर का वचन वास्तव में क्या कहता है, तब “हम फिर बालक न रहेंगे, जो मनुष्यों की ठग-विद्या और चतुराई से उनके भ्रम में डालने वाले उपायों के कारण हर प्रकार की शिक्षा की हवा से इधर-उधर उछाले और घुमाए जाते हैं।” (इफिसियों अध्याय 4 आयत 14)

नए नियम का नियमित और व्यवस्थित अध्ययन आपके भीतर प्रभु के प्रति ऐसा अटल और अडिग विश्वास उत्पन्न करेगा जिसे कोई भी परिस्थिति डिगा नहीं सकेगी, क्योंकि तब आप जानेंगे कि जीवन के तूफानों के बीच परमेश्वर ने आपके लिए क्या-क्या करने की प्रतिज्ञा की है।



अगले अध्याय में हम एक और ऐसे महत्वपूर्ण सिद्धांत पर विचार करेंगे, जो जीवन की परीक्षाओं में स्थिर बने रहने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। आपको यह सीखना होगा कि

अपना जीवन यीशु पर दृष्टि लगाए हुए कैसे जीना है, क्योंकि वही आपके विश्वास का स्रोत है।



यीशु प्रकट किए गए।

जब यीशु इस पृथ्वी पर थे, तब जिन लोगों ने उनके साथ समय बिताया, उनके जीवन पर उनका अत्यन्त गहरा प्रभाव पड़ा। इसका एक उदाहरण देखिए।

प्रभु के इस संसार से चले जाने के कुछ ही समय बाद, उनके प्रथम शिष्यों में से दो, पतरस और यूहन्ना ने यीशु के नाम में एक लँगड़े व्यक्ति को चंगा कर दिया। (प्रेरितों के काम अध्याय 3 आयत 1 से 11) उनके इस कार्य से धार्मिक अगुवे बहुत क्रोधित हो गए और उन्होंने उन दोनों को पकड़कर रात भर के लिए बन्दीगृह में डाल दिया। अगले दिन जब उन धार्मिक नेताओं ने उनसे पूछताछ की, तो वे यह देखकर आश्चर्यचकित रह गए कि पतरस और यूहन्ना ने कितने साहस और निर्भीकता के साथ उत्तर दिया।

“जब उन्होंने पतरस और यूहन्ना का साहस देखा और यह जान लिया कि वे अशिक्षित और साधारण मनुष्य हैं, तो वे अचम्भा करने लगे। फिर उन्होंने पहचान लिया कि ये यीशु के साथ रहे थे।” (प्रेरितों के काम अध्याय 4 आयत 13)।

साढ़े तीन वर्षों तक यीशु के साथ रहने से पतरस और यूहन्ना के भीतर ऐसा प्रत्यक्ष और अटल आत्मविश्वास, अर्थात् दृढ़ विश्वास, उत्पन्न हुआ था जिसने उन्हें अत्यन्त कठिन परिस्थितियों का सामना करते समय भी अडिग बनाए रखा। यद्यपि आज यीशु स्वर्ग में हैं, फिर भी वे हमारे जीवनो पर उसी प्रकार प्रभाव डाल सकते हैं जैसे उन्होंने पहली शताब्दी के उन लोगों के जीवन पर डाला था। हमारा प्रभु यह कार्य बाइबल के द्वारा, विशेष रूप से नए नियम के माध्यम से करता है, जिसे पवित्र आत्मा की प्रेरणा से उन लोगों ने लिखा जिन्होंने स्वयं यीशु के साथ जीवन बिताया, उनसे बातचीत की और उनके साथ चले-फिरे थे। इनमें यूहन्ना और पतरस भी सम्मिलित थे।

यीशु पर दृष्टि लगाए रखना।

विश्वास हमें परमेश्वर के वचन के द्वारा प्राप्त होता है, क्योंकि वही हमें बताता है कि परमेश्वर कैसा है और वह किस प्रकार कार्य करता है। प्रभु यीशु मसीह मानवजाति के लिए स्वयं परमेश्वर का सबसे स्पष्ट और पूर्ण प्रकटिकरण हैं। यीशु को परमेश्वर का वचन, अर्थात् देहधारी वचन, कहा गया है।

“आदि में वचन था, और वचन परमेश्वर के साथ था, और वचन परमेश्वर था... और वचन देहधारी हुआ और हमारे बीच में निवास किया।” (यूहन्ना अध्याय 1 आयत 1; यूहन्ना अध्याय 1 आयत 14)।

“प्राचीन समय में परमेश्वर ने हमारे पूर्वजों से भविष्यद्वक्ताओं के द्वारा अनेक बार और भिन्न-भिन्न प्रकार से बातें कीं, परन्तु इन अन्तिम दिनों में उसने हमसे अपने पुत्र के द्वारा बातें की हैं।” (इब्रानियों अध्याय 1 आयत 1 और 2)।

नया नियम मसीहियों को यह शिक्षा देता है कि वे “यीशु की ओर ताकते रहें, जो हमारे विश्वास का कर्ता और सिद्ध करने वाला है।” (इब्रानियों अध्याय 12 आयत 2)।

हम पवित्रशास्त्र के पृष्ठों में यीशु पर अपनी दृष्टि स्थिर रखते हैं। जीवित वचन, अर्थात् यीशु मसीह, लिखित वचन अर्थात् बाइबल के माध्यम से स्वयं को हम पर प्रकट करते हैं। जब हम पवित्रशास्त्र में प्रकट किए गए यीशु को देखते हैं, तब हमारे हृदय में ऐसा अटल विश्वास उत्पन्न होता है जो हमारे सामने आने वाली हर चुनौती का सामना कर सकता है।

यदि आपने नए नियम का अध्ययन नहीं किया है, तो आपने वास्तव में यीशु को नहीं देखा है। मेरा यह अर्थ नहीं है कि आप उन्हें उद्धारकर्ता के रूप में नहीं जानते। मेरा आशय यह है कि आप उन्हें उनकी पूर्णता में नहीं जान सकते और न ही ऐसा विश्वास प्राप्त कर सकते हैं जो जीवन के तूफानों में कभी डगमगाए नहीं। सम्भव है कि हमें इसका एहसास भी न हो, परन्तु प्रभु के विषय में जो कुछ हम जानते हैं, उसका बहुत बड़ा भाग हमारी व्यक्तिगत भावनाओं और अनुभवों पर आधारित होता है—हम उस समय क्या महसूस कर रहे हैं और अपनी परिस्थितियों में क्या देख रहे हैं। जब हमें अच्छा महसूस होता है और जीवन में सब कुछ ठीक चलता है, तब हमें परमेश्वर के प्रेम और उसकी देखभाल का पूरा विश्वास होता है। परन्तु जैसे ही हमारी परिस्थितियाँ और हमारी भावनाएँ बदलती हैं, वैसे ही उस पर हमारा भरोसा भी कमजोर पड़ने लगता है। परन्तु प्रभु यीशु मसीह स्वयं को हमारी बदलती हुई भावनाओं और परिस्थितियों के द्वारा प्रकट नहीं करते। वे स्वयं को अपने लिखित वचन के द्वारा प्रकट करते हैं। आप जितना अधिक बाइबल पढ़ेंगे, उतनी ही स्पष्टता से यीशु को देखेंगे, उन्हें उतना ही अधिक जानेंगे, और आपका विश्वास उतना ही अधिक दृढ़ होता जाएगा।

जहाँ बहुत-से सच्चे मन वाले लोग भूलवश अपने विश्वास की नींव अपनी आँखों से देखी हुई बातों और अपनी भावनाओं पर रखते हैं, वहीं कुछ अन्य लोग अलौकिक अनुभवों—जैसे स्वप्न, दर्शन और ऐसी आवाज़ों—पर भरोसा करते हैं जिन्हें वे प्रभु की ओर से मानते हैं। बाइबल स्पष्ट रूप से बताती है कि कभी-कभी परमेश्वर वास्तव में अपने लोगों से इस प्रकार के अलौकिक माध्यमों से भी बात करता है। फिर भी, बाइबल यह भी स्पष्ट करती है कि झूठे और नकली अलौकिक अनुभव भी होते हैं। इसलिए प्रत्येक अलौकिक घटना की जाँच परमेश्वर के लिखित वचन के आधार पर की जानी चाहिए। प्रभु की ओर से आने वाला कोई भी वास्तविक प्रकटिकरण पवित्रशास्त्र के साथ पूरी तरह मेल खाएगा।

यदि आप बाइबल से परिचित नहीं हैं—और यदि आप उसे नियमित रूप से नहीं पढ़ते, तो वास्तव में परिचित नहीं हैं—तो आपके पास यह परखने की क्षमता नहीं होगी कि कोई अलौकिक अनुभव वास्तव में परमेश्वर की ओर से है या नहीं। बाइबल ही प्रभु परमेश्वर के विषय में हमारी एकमात्र पूर्णतः सही और पूरी तरह विश्वासयोग्य प्रकाशना है। यदि आप बाइबल वास्तव में क्या कहती है, इससे परिचित नहीं हैं, तो न केवल आप वह विश्वास विकसित नहीं कर पाएँगे जिसकी आपको जीवन के तूफानों में दृढ़ बने रहने के लिए आवश्यकता है, बल्कि यह स्थिति आपके लिए खतरनाक भी है, क्योंकि तब धोखे में पड़ने की सम्भावना बहुत बढ़ जाती है।

धोखा।

यीशु के क्रूस पर चढ़ाए जाने से कुछ समय पहले, उन्होंने उन चिन्हों का उल्लेख किया जो यह संकेत देंगे कि उनका दूसरा आगमन निकट है। उन चिन्हों में से एक है धार्मिक धोखा, अर्थात् ऐसे झूठे मसीह और झूठे भविष्यद्वक्ता जो नकली चिन्हों और आश्चर्यकर्मों के द्वारा बहुत-से लोगों को धोखा देंगे।

“सावधान रहो कि कोई तुम्हें भ्रमा न दे। क्योंकि बहुत-से लोग मेरे नाम से आकर कहेंगे, ‘मैं ही मसीह हूँ,’ और वे बहुतों को भ्रमा देंगे।” (मत्ती अध्याय 24 आयत 4 और 5)

“क्योंकि झूठे मसीह और झूठे भविष्यद्वक्ता उठ खड़े होंगे, और वे बड़े चिन्ह और अद्भुत काम दिखाएँगे, ताकि यदि सम्भव हो तो परमेश्वर के चुने हुएों को भी भ्रमा दें। देखो, मैंने पहले ही तुम्हें बता दिया है।” (मत्ती अध्याय 24 आयत 24 और 25)

झूठे मसीह।

मसीह के पुनः आगमन के समय संसार की परिस्थितियों के विषय में बाइबल बहुत कुछ कहती है। पवित्रशास्त्र एक ऐसे विश्वव्यापी शासन, आर्थिक व्यवस्था और धार्मिक व्यवस्था का

वर्णन करता है, जिसे शैतान से प्रेरित और उसकी सामर्थ्य से समर्थित एक मनुष्य नियंत्रित करेगा, और वह इस पृथ्वी पर बहुत बड़ा विनाश लाएगा। (प्रकाशितवाक्य अध्याय 13)।

एक विश्वव्यापी मसीह-विरोधी धर्म इस अन्तिम विश्व-शासक का स्वागत करेगा और उसे उद्धारकर्ता के रूप में स्वीकार करेगा। वही अन्तिम और सबसे बड़ा झूठा मसीह होगा।

ये परिस्थितियाँ अचानक उत्पन्न नहीं होंगी। उनकी तैयारी अभी से हो रही है। हम ऐसे समय में जी रहे हैं जब बहुत-से लोग इस विषय में परस्पर विरोधी बातें कह रहे हैं कि यीशु कौन हैं और वे पृथ्वी पर क्यों आए थे। वर्तमान समय में एक झूठे विश्व-धर्म का निर्माण हो रहा है। यद्यपि यह धर्म मूल रूप से सच्ची बाइबिल आधारित मसीही शिक्षा के विरोध में है, फिर भी यह सुनने में मसीही प्रतीत होता है, क्योंकि यह बाइबल की आयतों का उपयोग करता है। परन्तु उन आयतों को उनके वास्तविक संदर्भ से अलग करके और उनका गलत अर्थ लगाकर प्रस्तुत किया जाता है।

क्या आप नए नियम से इतने परिचित हैं कि यदि कोई व्यक्ति यीशु के विषय में किसी आयत को गलत उद्धृत करे या उसका गलत उपयोग करे, तो आप उसे पहचान सकें?

मसीही धर्म का यह नया रूप परम्परागत बाइबल-आधारित मसीही विश्वास की अपेक्षा कहीं अधिक प्रेमपूर्ण और किसी का न्याय न करने वाला प्रतीत होता है। इसका दावा है कि आप क्या विश्वास करते हैं और आपका जीवन कैसा है, यह उतना महत्वपूर्ण नहीं है; सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि आप आध्यात्मिक हैं, ईमानदार हैं और एक अच्छा व्यक्ति बनने का प्रयास कर रहे हैं।

यह नकली मसीही धर्म समावेशिता और विविधता पर विशेष बल देता है। दुःख की बात यह है कि इन शब्दों के अर्थ बदल दिए गए हैं। अब उनका अर्थ यह समझा जाने लगा है कि यदि आप किसी भी विश्वास, विचार या व्यवहार को किसी भी कारण से गलत मानते हैं, तो आपको संकीर्ण सोच वाला, घृणा करने वाला और निश्चित रूप से सच्चा मसीही नहीं माना जाएगा। क्या आप बाइबल के सही ज्ञान के आधार पर इस प्रकार के झूठे आरोपों का उत्तर देने में सक्षम हैं और सच्चे सिद्धांत की रक्षा कर सकते हैं?

हम ऐसे समय में जी रहे हैं जब हमारी संस्कृति ने लगभग पूरी तरह पूर्ण सत्य की धारणा को अस्वीकार कर दिया है। आजकल लोगों को यह कहते सुनना सामान्य बात है, “वह तुम्हारा सत्य है, मेरा नहीं,” या “मैं अपने सत्य के अनुसार जीवन जीने की कोशिश कर रहा हूँ।”

परन्तु वास्तव में तुम्हारा सत्य और मेरा सत्य जैसी कोई बात नहीं होती। सत्य वस्तुनिष्ठ होता है। वस्तुनिष्ठ का अर्थ है—ऐसी बात जो तथ्यों और वास्तविक परिस्थितियों को व्यक्तिगत भावनाओं, पक्षपात या अपनी-अपनी व्याख्याओं से प्रभावित हुए बिना वैसे ही प्रस्तुत करे जैसे वे वास्तव में हैं।

सत्य हमारी भावनाओं या विचारों पर आधारित नहीं होता और न ही वह बदलता है। दो और दो चार ही होते हैं, चाहे आप उसे मानें या न मानें, चाहे आपको वह अच्छा लगे या न लगे।

पश्चिमी देशों में हमने ऐसी कई पीढ़ियाँ तैयार की हैं जिनके लिए वस्तुनिष्ठ तथ्य अब अधिक महत्व नहीं रखते। उनके लिए सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि कोई व्यक्ति कैसा महसूस करता है। प्रत्येक वर्ष ऑक्सफोर्ड शब्दकोश ऐसा एक अंतरराष्ट्रीय शब्द चुनता है जो यह दर्शाता है कि वर्तमान घटनाओं के प्रभाव से भाषा किस प्रकार बदल रही है। वर्ष 2016 के लिए चुना गया शब्द था “पोस्ट-ट्रुथ”। इसका अर्थ है—ऐसी परिस्थितियाँ जिनमें लोगों की राय बनाने में वस्तुनिष्ठ तथ्यों का प्रभाव कम हो जाता है, जबकि भावनात्मक अपील और व्यक्तिगत विश्वास अधिक प्रभाव डालते हैं।

दुःख की बात यह है कि ऐसी सोच मसीही समाज में भी प्रवेश कर चुकी है। बार्नारिस ग्रुप द्वारा वर्ष 2016 में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार, अमेरिका के नियमित रूप से मसीही जीवन जीने वाले लोगों में से लगभग 40 प्रतिशत अब पूर्ण सत्य में विश्वास नहीं करते। वे अपने विश्वास की नींव इस बात पर रखते हैं कि वे क्या महसूस करते हैं।

झूठे चिन्हों, झूठे मसीहों और झूठी शिक्षाओं से हमारी रक्षा करने वाला एकमात्र सुरक्षित साधन बाइबल का सही और शुद्ध ज्ञान है। बाइबल हमें सत्यदिखाती है। सत्य किसी विचार या सिद्धांत मात्र का नाम नहीं है, बल्कि वह एक व्यक्ति में प्रकट हुआ है—जीवित वचन, अर्थात् प्रभु यीशु मसीह। और यह जीवित वचन हमें लिखित वचन, अर्थात् परमेश्वर के वचन, के द्वारा प्रकट किया जाता है।

स्वयं यीशु ने कहा, “मार्ग और सत्य और जीवन मैं ही हूँ।” (यूहन्ना अध्याय 14 आयत 6)।

और उन्होंने अपने पिता से प्रार्थना करते हुए कहा, “तेरा वचन सत्य है।” (यूहन्ना अध्याय 17 आयत 17)।



नियमित और व्यवस्थित रूप से बाइबल का अध्ययन न केवल आपको वास्तविक यीशु को जानने और उन्हें वैसे देखने में सहायता करता है जैसे वे वास्तव में हैं, बल्कि यह आपकी दृष्टि और आपका ध्यान भी निरन्तर उन पर स्थिर बनाए रखने में आपकी सहायता करता है।



अपना ध्यान स्थिर रखें।

जीवन के प्रचण्ड तूफान परमेश्वर पर हमारे विश्वास की परीक्षा लेते हैं और उस पर दबाव डालते हैं। क्या आपको वह घटना याद है जब यीशु ने पतरस को गलील की झील पर अपने पास आने के लिए बुलाया था, जबकि तेज़ हवा चल रही थी और लहरें उफान मार रही थीं? पतरस अपनी मछली पकड़ने वाली नाव से उतरकर यीशु की ओर चलने लगा। जब तक उसकी दृष्टि प्रभु पर लगी रही, वह पानी पर चलता रहा। “परन्तु जब उसने तेज़ हवा को देखा, तो वह डर गया, और डूबने लगा।” (मत्ती अध्याय 14 आयत 30)।

यीशु ने अपने मित्र को बचा लिया, परन्तु उसके संदेह और अल्पविश्वास के कारण उसे डाँटा भी। पतरस यीशु पर विश्वास तो करता था, परन्तु जब हवा और लहरें अत्यन्त भयानक दिखाई देने लगीं, तब उसका विश्वास इतना दृढ़ नहीं था कि वह प्रभु पर पूरी तरह भरोसा कर सके। उसका विश्वास अभी उस स्तर तक विकसित नहीं हुआ था कि वह तूफान के सामने अडिग रह सके।

हममें से बहुत-से लोग पतरस के समान हैं। हम उत्साह के साथ आरम्भ तो करते हैं, परन्तु समय बीतने के साथ जो कुछ हम अपनी आँखों से देखते हैं और अपनी भावनाओं में अनुभव करते हैं, वही हमारा ध्यान हमारे विश्वास के स्रोत से हटाने लगता है, और तब हमारे मन में सन्देह उत्पन्न होने लगता है। यदि आपको जीवन के प्रचण्ड तूफानों के सामने दृढ़ बने रहना है, तो आपको यह सीखना होगा कि अपनी दृष्टि को कैसे स्थिर रखा जाए।

आपकी जड़ें गहरी होनी चाहिए।

जब यीशु इस पृथ्वी पर थे, तब वे आत्मिक सच्चाइयों को समझाने के लिए अक्सर दृष्टान्तों का उपयोग करते थे। एक ऐसे ही दृष्टान्त में प्रभु ने परमेश्वर के वचन के प्रचार की तुलना एक बोने वाले से की, जो बीज बोता है। इस दृष्टान्त के द्वारा यीशु ने स्पष्ट किया कि

परमेश्वर के वचन के प्रति प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिक्रिया यह निर्धारित करती है कि वह वचन उसके जीवन में कितना प्रभाव डालेगा। यीशु ने उन लोगों के विषय में कहा, “वे वे हैं जो वचन को सुनते ही आनन्द के साथ ग्रहण कर लेते हैं। परन्तु उनकी जड़ अपने भीतर गहरी नहीं होती, इसलिए वे थोड़े ही समय तक स्थिर रहते हैं। बाद में जब वचन के कारण क्लेश या सताव आता है, तो वे तुरन्त ठोकर खा जाते हैं।” (मरकुस अध्याय 4 आयत 16 और 17)

यदि आपको कठिन समय में स्थिर बने रहना है, तो आपकी आत्मिक जड़ें गहरी होनी चाहिए, ताकि अपनी परिस्थितियों में जो कुछ आप देखते और महसूस करते हैं, उसके कारण आप मुरझा न जाएँ। ये गहरी जड़ें तब विकसित होती हैं जब आप अपना ध्यान यीशु पर केन्द्रित रखते हैं और उसे निरन्तर वहीं स्थिर रखना सीखते हैं।

परमेश्वर के वचन पर मनन करें।

मसीहियों को यह शिक्षा दी गई है कि वे अपना जीवन “यीशु की ओर ताकते हुए” बिताएँ। (इब्रानियों अध्याय 12 आयत 2)

जिस यूनानी शब्द का अनुवाद “ताकते हुए” किया गया है, उसका अर्थ है ध्यानपूर्वक विचार करना।

जब आप किसी बात पर विचार करते हैं, तो आप उसके विषय में समय लेकर गहराई से सोचते हैं और उसे सावधानीपूर्वक अपने मन में रखते हैं। दूसरे शब्दों में, आप उस पर मनन करते हैं। मनन करने का अर्थ है किसी विचार या सत्य पर बार-बार चिन्तन करना, उसे अपने मन में उलटना-पलटना और गहराई से उस पर विचार करना। यहाँ जिस यूनानी शब्द का प्रयोग मनन के लिए किया गया है, उसका अर्थ है—किसी बात को अपने मन में बार-बार घुमाते रहना और उस पर निरन्तर विचार करते रहना।

यह किसी प्रकार का न्यू एज अभ्यास नहीं है, जिसमें आप अपने मन में यीशु की कल्पना करें। हम प्रभु पर मनन इस प्रकार करते हैं कि पवित्रशास्त्र के पृष्ठों में जैसे वे प्रकट किए गए हैं, उनके विषय में समय निकालकर गहराई से विचार करते हैं। हम इस बात पर मनन करते हैं कि यीशु ने क्या कहा, क्या किया, उनके स्वभाव पर विचार करते हैं और उनकी सामर्थ्य पर ध्यान लगाते हैं। नए नियम का नियमित और व्यवस्थित अध्ययन इस कार्य में आपकी सहायता करता है।

निरन्तर बाइबल पढ़ना न केवल आपको पवित्रशास्त्र से अधिक परिचित कराता है, जो क्रमशः आपको यीशु को और अधिक स्पष्ट रूप से प्रकट करता है, बल्कि यह परमेश्वर के वचन को आपके मन में भी ताज़ा बनाए रखता है। तब दिन भर के कार्यों के बीच भी आपके पास ऐसा

सत्य होता है जिस पर आप मनन कर सकते हैं, जिसके विषय में सोच सकते हैं और जिस पर ध्यानपूर्वक विचार कर सकते हैं। धीरे-धीरे आपकी सोच उसी दृष्टिकोण के अनुरूप होने लगती है जिस प्रकार परमेश्वर वास्तव में बातों को देखता है। आप स्वाभाविक रूप से वैसा ही सोचना आरम्भ कर देते हैं जैसा परमेश्वर अपने वचन में कहता है।

क्या कभी ऐसा हुआ है कि आपने किसी व्यक्ति के साथ बहुत समय बिताया हो और बाद में आपको एहसास हुआ हो कि आपने अनजाने में उसकी कुछ आदतें या व्यवहार अपना लिए हैं? या क्या आपने ध्यान दिया है कि यदि रात को सोने से पहले आपकी आँखों के सामने आने वाला अन्तिम दृश्य डरावना या बेचैन करने वाला हो, तो सोने का प्रयास करते समय बार-बार वही दृश्य आपके मन में घूमता रहता है?

मनुष्य की रचना ही इस प्रकार की गई है कि जिस बात को वह बार-बार देखता है और जिस पर अपना ध्यान केन्द्रित करता है, उसका उसके जीवन पर प्रभाव पड़ता है। और यदि आप किसी बात को जान-बूझकर अपने ध्यान के केन्द्र में बनाए रखने का प्रयास नहीं करते, तो धीरे-धीरे वह आपके मन से धुँधली पड़ने लगती है और अन्ततः स्मृति से ओझल होने लगती है।

परमेश्वर की इच्छा है कि हम अपने जीवन में उसके लिखित वचन के द्वारा उसकी ओर दृष्टि लगाए रखें और उसी के द्वारा उससे प्रभावित तथा परिवर्तित होते जाएँ। जब आप बार-बार परमेश्वर के वचन की ओर देखते हैं—उसे नियमित रूप से पढ़ते हैं और उस पर मनन करने का प्रयास करते हैं—तो उसका आपके मन पर स्थायी प्रभाव पड़ता है। स्मरण रखिए, बाइबल कोई साधारण पुस्तक नहीं है; यह अलौकिक है। यह आपके भीतर कार्य करती है और आपको सामर्थ्य प्रदान करती है, क्योंकि यह आपको परमेश्वर की भलाई और उसकी विश्वासयोग्यता के प्रति दृढ़ विश्वास दिलाती है। दूसरे शब्दों में, यह आपके आत्मिक जीवन की जड़ों को गहरा और दृढ़ बनाती है।

“बस वचन को बार-बार बोलते रहो!”

इस पुस्तक के आरम्भिक अध्यायों में हमने पुराने नियम के दो ऐसे अंशों पर विचार किया था जो परमेश्वर के वचन पर मनन करने को कठिन समय में स्थिर बने रहने से जोड़ते हैं। पहले अध्याय में मैंने उल्लेख किया था कि दाऊद ने एक भजन में उस विश्वासी की तुलना एक हरे-भरे वृक्ष से की है जो निरन्तर परमेश्वर के वचन पर मनन करता है। ऐसे व्यक्ति की जड़ें इतनी गहरी होती हैं कि वे उसे तूफ़ानों के समय स्थिर बनाए रखती हैं और सूखे के दिनों में भी उसके लिए जल प्राप्त करती रहती हैं। (भजन संहिता अध्याय 1 आयत 1 से 3)

चौथे अध्याय में मैंने यह भी बताया था कि प्रभु ने यहोशू से कहा था कि यदि वह पवित्रशास्त्र पर मनन करेगा, तो कनान देश में इस्राएल का नेतृत्व करते समय आने वाली प्रत्येक चुनौती में उसे सफलता मिलेगी। (यहोशू अध्याय 1 आयत 8)

इन दोनों स्थानों पर मनन के लिए जिस इब्रानी शब्द का प्रयोग किया गया है, उसका शाब्दिक अर्थ है धीरे-धीरे बोलना या बुदबुदाना। परन्तु उसके भावार्थ का अर्थ है—किसी बात पर गहराई से विचार करना या सावधानीपूर्वक उसका मनन करना।

दुर्भाग्य से, क्योंकि उस इब्रानी शब्द का शाब्दिक अर्थ बुदबुदाना है, इसलिए कुछ लोगों ने इस विचार को एक सूत्र या विधि बना दिया है। उनका कहना है कि यदि आप सही शब्दों को पर्याप्त बार दोहराते रहेंगे, तो परमेश्वर अवश्य आपकी परिस्थिति बदल देगा।

परन्तु पवित्रशास्त्र पर मनन करने का अर्थ केवल शब्दों को बार-बार बोलते रहना नहीं है। मनन का अर्थ है, जो कुछ आपने पढ़ा है उस पर तब तक गहराई से विचार करना, जब तक कि वह आपकी सोच और आपकी दृष्टि को बदल न दे। जब आप परमेश्वर के वचन पर ध्यानपूर्वक मनन करते हैं, तब आपके भीतर यह दृढ़ विश्वास उत्पन्न होता है कि वास्तविकता केवल वही नहीं है जो इस समय आपकी आँखों को दिखाई देती है या आपकी भावनाएँ अनुभव करती हैं। यही दृढ़ विश्वास, अर्थात् विश्वास, फिर आपकी बातचीत, आपकी सोच और कठिन परिस्थितियों के प्रति आपकी प्रतिक्रिया को बदल देता है। ऐसा इसलिए नहीं होता कि यह कोई तकनीक है जिससे कोई विशेष परिणाम प्राप्त किया जाए, बल्कि इसलिए कि वास्तविकता के प्रति आपका दृष्टिकोण ही बदल चुका होता है।

परमेश्वर के वचन पर मनन करने के महत्व को हम उस बात से भी समझ सकते हैं जो प्रेरित पौलुस ने उन विश्वासियों को लिखी थी जो बढ़ते हुए अत्यन्त कठोर सताव के तूफान का सामना कर रहे थे। उसने उन्हें स्मरण दिलाया कि चाहे उनके जीवन में कुछ भी घटे, उनके पास हर परिस्थिति का सामना करने के लिए आवश्यक सब कुछ है, क्योंकि सर्वशक्तिमान परमेश्वर उनके साथ है। अपने पाठकों के भीतर दृढ़ विश्वास उत्पन्न करने के लिए पौलुस ने उस घोषणा का उल्लेख किया जो प्रभु ने उस समय इस्राएलियों से की थी जब पिछली पीढ़ी के असफल होने के बाद वे कनान देश में प्रवेश करने की तैयारी कर रहे थे। (व्यवस्थाविवरण अध्याय 31 आयत 6 से 8) प्रभु ने उनसे प्रतिज्ञा की थी कि वह उनके लिए युद्ध करेगा और उन्हें भयभीत न होने के लिए प्रोत्साहित किया था।

“क्योंकि परमेश्वर ने स्वयं कहा है, ‘मैं तुझे कभी न छोड़ूँगा और न कभी तुझे त्यागूँगा।’ इसलिए हम पूरे विश्वास के साथ कह सकते हैं, ‘प्रभु मेरा सहायक है; मैं नहीं डरूँगा। मनुष्य मेरा क्या बिगाड़ सकता है?’” (इब्रानियों अध्याय 13 आयत 5 और 6)

मैंने जिन वाक्यांशों को गाढ़े अक्षरों में दर्शाया है, उन पर विशेष ध्यान दीजिए।

परमेश्वर ने कुछ कहा है ताकि हम भी कुछ कह सकें।

ध्यान दीजिए कि हम जो कहते हैं, वह परमेश्वर के मूल वचनों की शब्दशः पुनरावृत्ति नहीं होती। उस व्यक्ति ने उस वचन को पढ़ा है, उस पर गहराई से विचार किया है, उस पर मनन किया है, और अन्ततः एक ऐसे दृढ़ निष्कर्ष पर पहुँचा है जिसने उसकी सोच और उसकी दृष्टि को बदल दिया है। इसी बदली हुई दृष्टि ने कठिनाइयों के प्रति उसकी प्रतिक्रिया को भी परिवर्तित कर दिया है।

अब इस नए दृष्टिकोण के कारण वह पूरे विश्वास के साथ यह घोषणा कर सकता है कि वह नहीं डरता, क्योंकि उसे पूरा भरोसा है कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर उसकी सहायता अवश्य करेगा।



नियमित रूप से बाइबल पढ़ना आपको यह सीखने में सहायता करता है कि अपने विश्वास के स्रोत, अर्थात् यीशु, पर अपनी दृष्टि कैसे स्थिर रखनी है। जैसे-जैसे उन पर आपका भरोसा बढ़ता है, वैसे-वैसे वास्तविकता के प्रति आपकी दृष्टि भी बदलने लगती है। आपके आत्मिक जीवन की जड़ें गहरी होती जाती हैं, जो कठिन समय में भी आपको स्थिर बनाए रखने और संभाले रखने में सक्षम होती हैं।

“धन्य है वह मनुष्य जो यहोवा पर भरोसा रखता है, जिसका विश्वास यहोवा ही है। वह उस वृक्ष के समान होगा जो जल के किनारे लगाया गया है और जिसकी जड़ें धारा के पास फैलती जाती हैं। जब धूप पड़ती है तब भी वह नहीं डरता, उसके पत्ते हरे बने रहते हैं। सूखे के वर्ष में भी वह चिन्ता नहीं करता और फल लाना नहीं छोड़ता।” (यिर्मयाह अध्याय 17 आयत 7 और 8)।



ध्यान भटकाने वाली बातें।

बीज बोने वाले के अपने दृष्टान्त में यीशु ने एक और प्रकार के श्रोता का उल्लेख किया, जिसके लिए परमेश्वर का वचन प्रभावहीन हो जाता है। ऐसा श्रोता “संसार की चिंताओं और व्याकुलताओं तथा इस युग के भटकावों को भीतर आने देता है, जो वचन को दबा देते हैं और उसका दम घोट देते हैं, और वह निष्फल हो जाता है” (मरकुस अध्याय 4 आयत 19)। “चिंताओं” या “व्याकुलताओं” के लिए प्रयुक्त यूनानी शब्द एक ऐसे शब्द से निकला है जिसका अर्थ है “भिन्न-भिन्न दिशाओं में खींचना” या “ध्यान भटकाना।” अनेक प्रकार के भटकाव हमारे विरोध में उठ खड़े होते हैं और हमारा ध्यान हमारे विश्वास के स्रोत—परमेश्वर के वचन, अर्थात् यीशु—से हटा देते हैं। जीवन के तूफानों से सफलतापूर्वक पार होने के लिए इन भटकावों को पहचानना और उनसे उचित रीति से निपटना आवश्यक है।

आपके मन में होने वाला संघर्ष।

सच्चे मसीही जीवन की परीक्षाओं और क्लेशों के बीच परमेश्वर पर भरोसा करने का भरसक प्रयास करते हैं। परन्तु उनका विश्वास केवल उन आँधियों और लहरों से ही चुनौती नहीं पाता जिन्हें वे देख और अनुभव कर सकते हैं, बल्कि उन विचारों से भी जो निरन्तर उनके मन पर आक्रमण करते रहते हैं। कठिन समय में सबसे बड़ा युद्ध मन के भीतर होता है। हमारा एक वास्तविक शत्रु है जिसकी युक्तियाँ मानसिक होती हैं। शैतान परमेश्वर, हमारे अपने विषय में, और हमारी परिस्थितियों के विषय में हमारे मन में झूठे विचार प्रस्तुत करता है, ताकि वह हमसे परमेश्वर का वचन (जो बीज है) छीन ले (मरकुस अध्याय 4 आयत 15; इफिसियों अध्याय 6 आयत 11 से 12)।

• “तुम इससे कभी नहीं निकल पाओगे। तुम निकम्मे और असफल हो। जो कुछ तुम्हारे साथ हो रहा है, तुम उसी के योग्य हो। तुम बहुत बार चूक चुके हो। किसी को तुम्हारी परवाह नहीं

है, यहाँ तक कि परमेश्वर को भी नहीं। तुम अकेले ही मर जाओगे। क्यों न अपना जीवन समाप्त कर लो और इस सबका अंत कर दो?”

• “किसी और की दशा इतनी बुरी नहीं है। तुम इससे कहीं बेहतर के योग्य हो। तुम सबसे अधिक प्रयास करते हो, फिर भी तुम्हारे हाथ कुछ नहीं लगता। परमेश्वर की सेवा करके तुम मूर्ख बन रहे हो। यह सब उसी की गलती है। उसने तुम्हारे साथ अन्याय किया है। परमेश्वर की सेवा करने का कोई लाभ नहीं है।”

यदि तुम इन मानसिक चुनौतियों का उत्तर नहीं दे सकते और अपने मन पर अधिकार प्राप्त नहीं कर सकते, तो तुम इस तूफान में स्थिर नहीं रह पाओगे। और यदि तुम पवित्रशास्त्र से परिचित नहीं हो, अथवा अपनी परिस्थितियों का मूल्यांकन परमेश्वर के कहे हुए के अनुसार नहीं कर सकते, तो तुम्हारे पास वे उत्तर नहीं होंगे जिनकी तुम्हें आवश्यकता है। इस मानसिक संघर्ष में विजय प्राप्त करने के लिए परमेश्वर के वचन से भली-भाँति परिचित होना अत्यन्त आवश्यक है। यदि तुम नहीं जानते कि परमेश्वर तुम्हारे विषय में और तुम्हारी परिस्थितियों के विषय में क्या कहता है, और यदि तुम्हें उसके वचन को पूरा करने में उसकी विश्वासयोग्यता का दृढ़ विश्वास नहीं है, तो ये भटकाने वाले विचार और भावनाएँ तुम्हारे भीतर के थोड़े-से विश्वास का भी दम घोट देंगी।

इस प्रक्रिया को पहचानें।

जब हम कठिन और चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों का सामना करते हैं, तब एक स्वाभाविक प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है। हम तूफान को देखते हैं, और वह हमारी भावनाओं को उद्वेलित कर देता है। हम चिन्तित और भयभीत हो जाते हैं। हमारे मन में विचारों की बाढ़ आने लगती है—“मैं क्या करूँगा?” “मैं कैसे बचूँगा?” हम सबमें यह प्रवृत्ति होती है कि इन प्रश्नों का उत्तर केवल उसी आधार पर दें जो उस समय हम अपनी आँखों से देखते और अपनी भावनाओं से अनुभव करते हैं। फिर हम अपनी भावनाओं और विचारों को ऐसे और भी भयावह विचारों की ओर ले जाने देते हैं, जो हमारी भावनाओं को और अधिक भड़का देते हैं। जब भावनाएँ और विचार एक-दूसरे को निरन्तर उकसाते रहते हैं, तब अपने आप से की जाने वाली हमारी बातचीत अधिक से अधिक अव्यवस्थित और विकृत होती चली जाती है।

• “इस आर्थिक परिस्थिति में मेरी आयु के व्यक्ति को भला नौकरी कैसे मिल सकती है? मुझे फिर कभी नौकरी नहीं मिलेगी। मेरा पड़ोसी भी ऐसी ही परिस्थिति में था, और उसने अपना सब कुछ खो दिया!”

• “यदि मेरी पत्नी धन का प्रबन्ध करने में इतनी लापरवाह न होती, तो आज हम इस स्थिति में न होते! यह सब उसी की गलती है! आखिर मैंने उससे विवाह ही क्यों किया?”

• “यदि मैं अपने बिलों का भुगतान नहीं कर पाया, तो मेरा घर चला जाएगा। मेरा परिवार किसी गली में रहने के लिए विवश हो जाएगा। फिर हम या तो भूख से मर जाएंगे या ठंड से!”

यीशु ने अपनी एक अन्य शिक्षा में इस बढ़ती हुई मानसिक प्रक्रिया का सामना करने का उपाय बताया, जब उन्होंने अपने चेलों से कहा कि जीवन की आवश्यकताओं के विषय में चिन्ता न करें (मती अध्याय 6 आयत 25 से 34)। प्रभु ने अपनी शिक्षा इन शब्दों से आरम्भ की, “इसलिए मैं तुम से कहता हूँ, अपने जीवन की चिन्ता मत करो कि तुम क्या खाओगे, क्या पियोगे, और न अपने शरीर की कि क्या पहनोगे” (मती अध्याय 6 आयत 25)। “चिन्ता” के लिए यहाँ वही यूनानी शब्द प्रयुक्त हुआ है, जिसका प्रयोग यीशु ने बीज बोने वाले के दृष्टान्त में “भटकाने वाली चिन्ता” के लिए किया था (मरकुस अध्याय 4 आयत 19)। दूसरे शब्दों में, हमारे प्रभु कह रहे थे कि अपनी परिस्थितियों को अपने ध्यान को भटकाने मत दो, और बार-बार अपने आप से यह मत पूछते रहो कि तुम्हें भोजन, वस्त्र और आश्रय कहाँ से मिलेगा। उन्होंने अपने सुनने वालों को आकाश के पक्षियों और मैदान के फूलों पर ध्यान देने के लिए कहा, जो भोजन पाते हैं और जिनका श्रृंगार होता है, क्योंकि परमेश्वर उनकी व्यवस्था करता है। यीशु ने अपने श्रोताओं को स्मरण कराया कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर की दृष्टि में उनका मूल्य पक्षियों और फूलों से कहीं अधिक है।

इस उदाहरण के द्वारा यीशु हमें उन भटकावों से निपटने के विषय में अत्यन्त व्यावहारिक शिक्षा देते हैं, जो वचन रूपी बीज को नष्ट कर देते हैं। जब तुम अभाव का सामना कर रहे हो, चिन्तित हो, और तुम्हारे मन में विचारों की बाढ़ आने लगे, तब तुम्हें अपने संकल्प का प्रयोग करके अपना ध्यान फिर से उस सत्य पर लगाना होगा, जैसा परमेश्वर उसे देखता है। जो कुछ तुम देखते और अनुभव करते हो, उसी पर ध्यान देने और उसी की चर्चा करने के स्थान पर, अपने प्रेममय पिता के विषय में अपने आप से बातें करना आरम्भ करो। अपने आप को स्मरण दिलाओ कि जैसे वह फूलों और पक्षियों की देखभाल करता है, वैसे ही वह तुम्हारी भी देखभाल करेगा। अभाव के तूफान के बीच यह पूछना अनुचित नहीं है कि आवश्यकताओं की पूर्ति कहाँ से होगी। परन्तु यदि तुम उस विचार पर मनन करते हो, तो तुम्हारे पास परमेश्वर के वचन के अनुसार उसका उत्तर भी होना चाहिए। यीशु हमें उसका सही उत्तर देते हैं—तुम्हारा स्वर्गीय पिता तुम्हारी सहायता करेगा।

यीशु संकट का समाधान करने के लिए कोई ऐसा सूत्र नहीं दे रहे थे कि केवल कुछ विशेष शब्द कहना बन्द कर दो और कुछ दूसरे शब्द बोलना आरम्भ कर दो, तो तुम्हारी समस्या समाप्त हो जाएगी। इसका किसी विधि या तकनीक से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसका सम्बन्ध अपनी वास्तविकता की समझ को बदलने और अपनी परिस्थितियों को वैसे देखना सीखने से है, जैसी वे वास्तव में हैं। वास्तविकता यह है कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर, जो तुम्हारा पिता

भी है, तुम्हारे साथ है और तुम्हारे पक्ष में है। और वह तुम्हें इस तूफान के पार ले जाएगा, जब तक कि वह समाप्त न हो जाए।

अपने मन को वश में रखो।

तुम अपने विचारों को अनियन्त्रित नहीं छोड़ सकते। तुम्हें अपने मन को वश में रखना सीखना होगा। जब मैं कहती हूँ कि अपने विचारों पर नियन्त्रण रखो, तो मेरा अर्थ यह नहीं है कि तुम्हारे मन में फिर कभी कोई नकारात्मक या सन्देह से भरा विचार नहीं आएगा। मेरा अर्थ यह है कि तुम उन विचारों को पहचानना सीखो जो परमेश्वर के वचन का विरोध करते हैं, और यह जानो कि परमेश्वर जो कहता है, उसके अनुसार उनका उत्तर कैसे देना है। यही कारण है कि पवित्रशास्त्र का नियमित अध्ययन करने वाला बनना इतना आवश्यक है। तुम अपने विचारों पर केवल उसी बात से नियन्त्रण रख सकते हो जो पहले से तुम्हारे मन में भरी हुई है। यदि तुमने पवित्रशास्त्र के नियमित अध्ययन के द्वारा अपने मन को परमेश्वर के वचन से परिपूर्ण नहीं किया है, तो तुम इस मानसिक संघर्ष में पराजित हो जाओगे।

जब कठिनाइयाँ आती हैं और देखने, भावनाओं तथा विचलित करने वाले विचारों की वह प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है, तब तुम्हें यह निर्णय लेना होगा कि तुम अपना ध्यान फिर से परमेश्वर और उसके वचन पर केन्द्रित करोगे। यही बात यीशु का अभिप्राय था, जब उन्होंने अपने अनुयायियों को पक्षियों और फूलों पर ध्यान देने की शिक्षा दी। अपना ध्यान फिर से उस वास्तविकता पर लगाओ, जैसी वह वास्तव में है। तुम्हारा एक स्वर्गीय पिता है, जो अपने लोगों की देखभाल करता है।

तुम्हें एक 'एस.ओ.एस.' की आवश्यकता है।

मैं लोगों को प्रोत्साहित करती हूँ कि उनके पास एक एस.ओ.एस. हो, अर्थात् ऐसा वाक्य जो उनके उद्धारकर्ता पर दृष्टि को फिर से स्थिर कर दे और उनका ध्यान वास्तविकता की ओर लौटा दे। मैं स्वयं पवित्रशास्त्र की असंख्य आयतें जानती हूँ और उन्हें उद्धृत भी कर सकती हूँ। परन्तु तुम्हारी ही तरह मैं भी जानती हूँ कि विनाशकारी समाचार सुनना और अचानक किसी ऐसी परिस्थिति का सामना करना कैसा होता है, जो असम्भव प्रतीत होती है। मैंने भी भावनाओं के भँवर और अनियन्त्रित विचारों का अनुभव किया है। ऐसे समय में मेरा एस.ओ.एस. वाक्य यह होता है—“प्रभु की स्तुति हो, यह परिस्थिति परमेश्वर से बड़ी नहीं है।”

मैं यह आनन्द की भावनात्मक अभिव्यक्ति के रूप में नहीं कहती। बल्कि मैं परमेश्वर की महानता को स्वीकार करती हूँ। यह वाक्य परमेश्वर के वचन के विपरीत किसी भी बात को

मेरे मुँह से निकलने से रोकता है, मेरे मन पर अधिकार करने से रोकता है, और मेरे कार्यों को नियंत्रित करने से रोकता है।

आत्मा की तलवार।

हम सभी के मन और भावनाओं के स्वभाव में कुछ न कुछ कमज़ोरियाँ होती हैं। हमारा जन्म एक पतित संसार में हुआ, हमारा पालन-पोषण त्रुटिपूर्ण मनुष्यों के द्वारा हुआ, और जीवन के अनेक अनुभवों ने हमें नकारात्मक रूप से भी प्रभावित किया। इन सब बातों ने मिलकर हमारे व्यक्तित्व को अच्छे और बुरे, दोनों प्रकार से आकार दिया है। परिणामस्वरूप, हम सभी के प्राण (मन और भावनाओं) में ऐसी कमज़ोरियाँ होती हैं, जो कठिन समय में जीवन को और अधिक कठिन बना सकती हैं। ये कमज़ोरियाँ इस बात को प्रभावित करती हैं कि हम जीवन की घटनाओं की व्याख्या कैसे करते हैं और उनका उत्तर किस प्रकार देते हैं। यदि बचपन से विकसित हुई कुछ विचारधाराओं के कारण तुम अपने आप को असफल समझते हो, तो तुम प्रत्येक चुनौती का सामना उसी मानसिक और भावनात्मक दृष्टिकोण से करोगे। ये पहले से बनी हुई धारणाएँ, ये अस्वस्थ, आत्म-विनाशकारी और हानिकारक विचारधाराएँ, तूफ़ान के बीच हमें विशेष प्रकार के झूठ और भ्रामक बातों के प्रति भी अधिक संवेदनशील बना देती हैं। पवित्रशास्त्र का नियमित अध्ययन तुम्हें इन झूठों को पहचानने और उन्हें अस्वीकार करने में सहायता करता है।

इस विषय पर गहराई से चर्चा करने के लिए एक और पुस्तक की आवश्यकता होगी। परन्तु अभी के विषय के लिए मुख्य बात यह है: पवित्रशास्त्र एक अलौकिक पुस्तक है। जो लोग इसका नियमित अध्ययन करते हैं, उनके भीतर यह कार्य करता है और परिवर्तन उत्पन्न करता है। यदि तुम पवित्रशास्त्र का नियमित अध्ययन करने वाले बन जाओगे, तो परमेश्वर का वचन तुम्हारे स्वभाव की उन कमियों को प्रकट करेगा जिनसे तुम स्वयं भी अनजान हो, परन्तु जिनका सामना करना आवश्यक है। पवित्रशास्त्र तुम्हें उन झूठी और भ्रामक बातों को पहचानने में भी सहायता करेगा, जो तुम्हारे मन में अस्वस्थ विचारधाराओं को जन्म देती हैं। पवित्रशास्त्र वही विशेष साधन है जिसका उपयोग पवित्र आत्मा हमारे चरित्र को गढ़ने और सँवारने के लिए करता है। परमेश्वर का वचन उसकी तलवार है (इफिसियों अध्याय 6 आयत 17)।

“क्योंकि परमेश्वर का वचन जीवित और प्रभावशाली है, और हर दोधारी तलवार से भी अधिक पैना है। वह प्राण और आत्मा, गाँठ-गाँठ और गूदे-गूदे को अलग करके आर-पार छेद देता है, और मन की भावनाओं तथा विचारों को परखता है।” (इब्रानियों अध्याय 4 आयत 12)।

“और हम सब, जो अनावृत्त मुख से प्रभु के तेज का दर्पण में प्रतिबिम्ब के समान दर्शन करते हैं, प्रभु के द्वारा, जो आत्मा है, उसी तेजस्वी स्वरूप में अंश-अंश करके बदलते जाते हैं।” (2 कुरिन्थियों अध्याय 3 आयत 18)।

यीशु के उदाहरण का अनुसरण करो।

जब परमेश्वर का वचन हमारे भीतर निरन्तर परिवर्तन उत्पन्न करता है, तब हमारी प्रतिक्रियाएँ अधिकाधिक मसीह के समान होती जाती हैं। स्वर्गीय पिता के साथ परमेश्वर के पुत्र और पुत्रियाँ किस प्रकार सम्बन्ध रखते हैं, इसका सर्वोत्तम उदाहरण यीशु हैं। क्या तुम्हें वह दूसरी घटना स्मरण है, जब यीशु और उनके चेले गलील की झील को पार करते समय एक भयंकर तूफान में फँस गए थे? नाव में पानी भरने लगा था और उसके डूब जाने का खतरा था। नाव में उपस्थित लोग भयभीत थे, परन्तु यीशु तनिक भी विचलित नहीं हुए। वे जानते थे कि उनका स्वर्गीय पिता उनके साथ है, और उन्हें अपने पिता के नाम में उस प्राणघातक तूफान को शान्त करने का अधिकार प्राप्त है। इसलिए उन्होंने तूफान को शान्त हो जाने की आज्ञा दी (मरकुस अध्याय 4 आयत 35 से 41)। यदि तुम भी जीवन की परिस्थितियों का सामना उसी प्रकार करना सीख जाओ जैसे यीशु ने किया, तो कोई भी तूफान तुम्हें पराजित नहीं कर सकेगा।



जब आँधियाँ चलती हैं और समुद्र उफान मारता है, तब हमें यह निर्णय लेना होता है कि हम “अपनी दृष्टि उन सब बातों से हटाकर, जो ध्यान भटकाती हैं, यीशु पर लगाए रखें, जो हमारे विश्वास के कर्ता और सिद्ध करने वाले हैं” (इब्रानियों अध्याय 12 आयत 2)।

हम भटकाने वाले विचारों और भावनाओं का इन्कार नहीं करते, और न ही यह दिखावा करते हैं कि कोई तूफान है ही नहीं। इसके विपरीत, हम यह पहचानते हैं कि हमारी परिस्थिति केवल उतनी ही नहीं है जितनी हम अपनी आँखों से देखते और अपनी भावनाओं से अनुभव करते हैं। परमेश्वर, जो हमारा पिता है, हमारे साथ है और हमारे पक्ष में है। जब तक तूफान टल नहीं जाता, वह हमें सम्भाले रखेगा; और जब तक वह हमें उससे बाहर नहीं निकाल देता, तब तक वह हमें उसके बीच से सुरक्षित ले चलता रहेगा। तूफान समाप्त होने तक वही हमें स्थिर और सुरक्षित बनाए रखेगा।

पवित्रशास्त्र का नियमित अध्ययन तुम्हें परिस्थितियों को वैसा देखने में सहायता करता है जैसी वे वास्तव में हैं। यह तुम्हें उन मानसिक और भावनात्मक चुनौतियों का सामना करने के योग्य बनाता है, जो इस जीवन को कहीं अधिक कठिन बना सकती हैं। एक बार फिर, जीवन की परीक्षाओं में स्थिर बने रहने और उन पर जय प्राप्त करने का आधार पवित्रशास्त्र का नियमित अध्ययन ही है।



आपके पास आशा अवश्य होनी चाहिए।

जीवन की कठिनाइयों से सुरक्षित निकलने के लिए एक और बात अत्यन्त आवश्यक है। तुम्हारे भीतर आशा होनी चाहिए—ऐसी दृढ़ अपेक्षा कि आने वाले दिन अधिक उज्ज्वल होंगे। यदि तुम्हारे पास आशा नहीं होगी, तो तुम तूफान का अन्त होने तक स्थिर नहीं रह सकोगे। आशा एक ऐसे लंगर के समान है, जो तुम्हें दृढ़ता से स्थिर रखती है, चाहे तुम्हारे विरुद्ध उठी हुई शक्तियाँ कितनी ही प्रबल क्यों न हों (इब्रानियों अध्याय 6 आयत 18 से 19)। यह आशा हमें परमेश्वर के लिखित वचन के द्वारा प्राप्त होती है। जैसा कि भजनकार ने लिखा है, “तेरा वचन ही मेरी आशा का एकमात्र स्रोत है” (भजन संहिता अध्याय 119 आयत 114)।

पवित्रशास्त्र हमारे हृदयों में आशा उत्पन्न करता है, क्योंकि वह उस परमेश्वर को प्रकट करता है जिसके लिए कोई भी बाधा इतनी बड़ी नहीं है और कोई भी तूफान इतना भयंकर नहीं है कि वह उसका सामना न कर सके। उसके लिए ऐसी कोई परिस्थिति नहीं है जो असम्भव हो, और न ही ऐसी कोई समस्या है जिसका समाधान न हो सके। पवित्रशास्त्र हमें दिखाता है कि परमेश्वर केवल सामर्थी ही नहीं है, बल्कि अपने लोगों की सहायता करने के लिए पूर्णतः इच्छुक भी है। जो लोग इस सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ परमेश्वर की सेवा करते हैं, उनके लिए निराशाजनक परिस्थिति जैसी कोई बात नहीं होती। प्रत्येक हानि, प्रत्येक कठिनाई और प्रत्येक पीड़ा अस्थायी है, और उसकी सामर्थ्य के द्वारा परिवर्तित की जा सकती है—चाहे इस जीवन में हो या आने वाले जीवन में।

एक टूटे हुए संसार में आशा।

पवित्रशास्त्र का आधे से अधिक भाग इतिहास है। यह उन वास्तविक लोगों का विवरण है, जिन्हें अत्यन्त कठिन परिस्थितियों के बीच परमेश्वर से वास्तविक सहायता प्राप्त हुई। इन

घटनाओं को इस उद्देश्य से भी लिखा गया कि हमारे भीतर यह आशा उत्पन्न हो कि जैसे प्रभु ने उन स्त्री-पुरुषों की सहायता की, वैसे ही वह हमारी भी सहायता करेगा। “जो कुछ पहले लिखा गया, वह हमारी शिक्षा के लिए लिखा गया, ताकि हम धीरज और पवित्रशास्त्र से मिलने वाले प्रोत्साहन के द्वारा आशा रखें” (रोमियों अध्याय 15 आयत 4)।

ऐसे एक व्यक्ति के उदाहरण पर विचार करो, जिसने अपनी कठिन परिस्थितियों को बदलते हुए देखा—कुछ इस जीवन में और कुछ इस जीवन के बाद। लगभग तीन हजार वर्ष पहले इस्राएल पर राज्य करने वाले दाऊद ने अत्यन्त बड़ी विपत्तियों का सामना किया। उसके जीवन के आरम्भ में ही परमेश्वर ने उससे प्रतिज्ञा की थी कि वह राजा बनेगा। परन्तु सिंहासन पर बैठने से पहले दाऊद को अनेक वर्षों तक ऐसे शत्रुओं के आक्रमण सहने पड़े, जो उसे नष्ट कर देना चाहते थे। फिर भी प्रभु परमेश्वर ने उसे छुड़ाया और उससे की हुई अपनी प्रतिज्ञा को पूरा किया। तूफान के पार पहुँचने के बाद दाऊद यह कह सका कि कठिन समय में परमेश्वर पर उसकी आशा ने ही उसे सम्भाले रखा। उसने लिखा:

“यदि मुझे यह विश्वास न होता कि जीवितों की भूमि में मैं यहोवा की भलाई को देखूँगा, तो मेरा क्या होता? यहोवा की बाट जोह। हियाव बाँध और तेरा हृदय दृढ़ रहे। हाँ, यहोवा की ही बाट जोह।” (भजन संहिता अध्याय 27 आयत 13 से 14)।

बाद में अपने जीवन में दाऊद ने अपने एक पुत्र की मृत्यु का भी दुःख सहा। फिर भी इस हृदयविदारक क्षति के बीच उसकी आशा बनी रही, क्योंकि वह जानता था कि उसका यह वियोग स्थायी नहीं है। वह एक दिन अपने पुत्र से फिर मिलेगा। “जब तक बालक जीवित था, तब तक मैं उपवास करता और रोता रहा, क्योंकि मैंने सोचा, ‘क्या पता यहोवा मुझ पर अनुग्रह करे और बालक जीवित रहे।’ परन्तु अब वह मर गया है; फिर मैं क्यों उपवास करूँ? क्या मैं उसे फिर लौटा सकता हूँ? मैं एक दिन उसके पास जाऊँगा, परन्तु वह मेरे पास लौटकर नहीं आएगा।” (2 शमूएल अध्याय 12 आयत 22 से 23)।

अनन्तकालीन दृष्टिकोण।

हमारी आशा की व्यापकता को पूरी तरह समझने के लिए आवश्यक है कि हमारे पास अनन्तकालीन दृष्टिकोण हो। अनन्तकालीन दृष्टिकोण यह स्वीकार करता है कि जीवन केवल इस वर्तमान जीवन तक ही सीमित नहीं है। जब कोई मनुष्य मरता है, तो उसका अस्तित्व समाप्त नहीं हो जाता, और हमारे अस्तित्व का अधिक महान तथा श्रेष्ठ भाग इस जीवन के बाद है। इस जीवन की कठिनाइयाँ उस महिमा की तुलना में कुछ भी नहीं हैं जो हमारे सामने हैं। महान प्रेरित पौलुस, जिसने अपनी मृत्यु से बहुत वर्षों पहले स्वर्ग का दर्शन किया था, ने लिखा: “मेरे विचार में इस समय के दुःख उस महिमा की तुलना में कुछ भी नहीं हैं,

जो हम पर प्रकट होने वाली है।” (रोमियों अध्याय 8 आयत 18)। पौलुस अपनी अनेक कठिनाइयों को क्षणिक और हल्का समझ सका, क्योंकि वह उन्हें अनन्तकाल के दृष्टिकोण से देखता था। “क्योंकि हमारा यह क्षणभर का हल्का-सा क्लेश हमारे लिए अत्यन्त महान और अनन्त महिमा उत्पन्न करता जाता है, जो उसकी तुलना में कहीं बढ़कर है।” (2 कुरिन्थियों अध्याय 4 आयत 17)। इसी दृष्टिकोण ने पौलुस को ऐसी आशा दी जिसने उसके सामने आने वाली हर विपत्ति में उसे स्थिर बनाए रखा। वह जानता था कि “प्रभु मुझे हर बुरे आक्रमण से छुड़ाएगा और अपने स्वर्गीय राज्य में सुरक्षित पहुँचा देगा।” (2 तीमुथियुस अध्याय 4 आयत 18)

- पौलुस ने समझ लिया था कि आने वाले जीवन की तुलना में इस जीवन भर का दुःख भी अत्यन्त तुच्छ है। आज स्वर्ग में उपस्थित कोई भी व्यक्ति, स्वयं पौलुस सहित, इस कठिन जीवन की यात्रा के दौरान सहन किए गए कष्टों के कारण आँसू नहीं बहाता।

- प्रेरित यह भी समझता था कि पाप से क्षतिग्रस्त इस संसार में परमेश्वर जीवन की कठिनाइयों का उपयोग अपने अनन्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए करता है। और जो कुछ भी हमारे जीवन में घटित होता है, उसमें से भी वह वास्तविक भलाई उत्पन्न कर सकता है (रोमियों अध्याय 8 आयत 28; उत्पत्ति अध्याय 50 आयत 20)।

जब हम मरते हैं, उसके बाद हमारे लिए क्या प्रतीक्षा कर रहा है, इस विषय पर विस्तृत अध्ययन के लिए मेरी पुस्तक सूचसूच आना अभी बाकी है — बाइबल स्वर्ग के बारे में क्या कहती है - पढ़ें। और यह अधिक गहराई से समझने के लिए कि परमेश्वर जीवन की कठिनाइयों का उपयोग किस प्रकार अनन्तकालीन परिणाम उत्पन्न करने के लिए करता है, मेरी पुस्तक ऐसा क्यों हुआ? परमेश्वर क्या कर रहा है? पढ़ें।

अदृश्य वास्तविकताएँ।

पौलुस जीवन की परीक्षाओं का सामना आशा के साथ कर सका, क्योंकि वह केवल दिखाई देने वाली बातों तक ही सीमित नहीं रहता था। अपनी अनेक कठिनाइयों को क्षणिक और हल्का कहने के तुरन्त बाद उसने लिखा: “इसलिए हम अपनी दृष्टि देखी हुई वस्तुओं पर नहीं, वरन् अनदेखी वस्तुओं पर लगाए रहते हैं; क्योंकि देखी हुई वस्तुएँ थोड़े समय के लिए हैं, परन्तु अनदेखी वस्तुएँ अनन्तकाल तक बनी रहती हैं।” (2 कुरिन्थियों अध्याय 4 आयत 18)। पौलुस के इस कथन में जिस यूनानी शब्द का अनुवाद “दृष्टि लगाए रहते हैं” किया गया है, उसका अर्थ मन को किसी बात पर केन्द्रित करना या उस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना है। तुम्हारी और मेरी ही तरह पौलुस को भी यह निर्णय लेना पड़ता था कि वह अपना ध्यान उस

पर लगाए जिसे वह अपनी आँखों से नहीं देख सकता था—सर्वशक्तिमान परमेश्वर, जो उसके साथ था और उसके पक्ष में था। उसे अपने मन को इस सत्य पर स्थिर रखना पड़ता था कि केवल इसी जीवन में ही सहायता और छुटकारा नहीं है, बल्कि इस जीवन के बाद पुनर्स्थापना और प्रतिफल भी है।

पवित्रशास्त्र परमेश्वर और उसके सामर्थ्य तथा प्रबन्ध के राज्य की उन अदृश्य वास्तविकताओं को प्रकट करता है—ऐसे राज्य को, जो इस वर्तमान जीवन को प्रभावित कर सकता है और वास्तव में करता भी है, और जब हम अपनी अन्तिम साँस लेंगे, तब वही हमें अपने भीतर ग्रहण करेगा। यह प्रकाशन हमारे भीतर ऐसी आशा उत्पन्न करता है, जो हमें जीवन के तूफानों में स्थिर रहने के योग्य बनाती है। यद्यपि तुम अपनी आँखों से परमेश्वर को नहीं देख सकते, फिर भी तुम जानते हो कि वह तुम्हारे साथ है, तुम्हारे पक्ष में है, और इस जीवन में तुम्हारी सहायता करेगा। और यद्यपि आने वाले जीवन का आनन्द तुमने अभी तक अपनी आँखों से नहीं देखा है, फिर भी आगे जो तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है, उसका ज्ञान तुम्हें उस समय तक सम्भाले रखता है।

अपना दृष्टिकोण बदलो।

पवित्रशास्त्र का नियमित अध्ययन तुम्हारी परिस्थितियों को देखने का ढंग बदल देता है। परमेश्वर का वचन तुम्हें जीवन की परीक्षाओं को सही दृष्टिकोण से देखना सिखाता है। अनन्तकाल की तुलना में तुम्हारी वर्तमान कठिनाइयाँ इतनी बड़ी प्रतीत नहीं होतीं। तब तुम समझने लगते हो कि अनन्तकाल में पहुँचकर तुम्हें उन बातों की चिन्ता नहीं रहेगी, जिनका सामना तुम अभी कर रहे हो। यद्यपि यह दृष्टिकोण तुम्हारी वर्तमान पीड़ा को समाप्त नहीं करता, फिर भी यह तुम्हारे भावनात्मक बोझ को हल्का कर देता है, क्योंकि तुम जानते हो कि आगे प्रतिफल, पुनर्स्थापना और पुनर्मिलन तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। और यही तुम्हें आशा प्रदान करता है।



तुम चाहे किसी भी परिस्थिति से होकर क्यों न गुजर रहे हो, वह निराशाजनक स्थिति नहीं है, क्योंकि तुम उस परमेश्वर की सेवा करते हो, जो सब बातों को ठीक कर देता है—कुछ इस जीवन में और कुछ आने वाले जीवन में। तुम आशा के परमेश्वर की सेवा करते हो।

“आशा का परमेश्वर विश्वास करने के कारण तुम्हें सम्पूर्ण आनन्द और शान्ति से परिपूर्ण करे, ताकि तुम पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से आशा में भरपूर होते जाओ।” (रोमियों अध्याय 15 आयत 13)।

10



तूफ़ान के बीच आनन्द और शान्ति।

आओ अब उस आयत पर और ध्यानपूर्वक विचार करें जिसका उल्लेख पिछले अध्याय के अन्त में किया गया था: “आशा का परमेश्वर विश्वास करने के कारण तुम्हें सम्पूर्ण आनन्द और शान्ति से परिपूर्ण करे, ताकि तुम पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से आशा में भरपूर होते जाओ।” (रोमियों अध्याय 15 आयत 13)। कठिन समय में स्थिर बने रहने के लिए शान्ति और आनन्द भी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। और आशा की ही तरह, इन दोनों का भी सीधा सम्बन्ध परमेश्वर के वचन से प्राप्त होने वाले ज्ञान से है।

अत्यन्त कठिन परिस्थितियों के बीच आनन्द और शान्ति का अनुभव करना केवल कुछ विशेष भावनाएँ रखने का नाम नहीं है। भावनाएँ हमारे चारों ओर घटित होने वाली घटनाओं के अनुसार आती-जाती रहती हैं। यदि तुम किसी भयावह बात को देखते हो, तो तुम्हें भय अनुभव होता है। जब वह संकट टल जाता है, तो तुम्हें राहत का अनुभव होता है। ऐसी भावनात्मक प्रतिक्रियाएँ स्वाभाविक भी हैं और उचित भी। परन्तु जब किसी लम्बी परीक्षा के दौरान भय, चिन्ता और मानसिक पीड़ा लगातार बनी रहती है, तब तुम्हें ऐसी गहरी सामर्थ्य की आवश्यकता होती है, जो तुम्हें तब तक सम्भाले रखे जब तक तुम्हारी स्थिति बेहतर न हो जाए। वह सामर्थ्य आशा के परमेश्वर से मिलने वाली शान्ति और आनन्द है।

परमेश्वर के वचन से मिलने वाली शान्ति।

इस टूटे हुए संसार में कठिनाइयों से बचना सम्भव नहीं है। स्वयं यीशु ने कहा, “संसार में तुम्हें क्लेश, परीक्षाएँ, संकट और निराशाएँ सहनी पड़ेंगी।” (यूहन्ना अध्याय 16 आयत 33)। ध्यान दो कि जीवन की अपरिहार्य कठिनाइयों के विषय में कहने से पहले उन्होंने क्या कहा: “मैंने ये बातें तुमसे इसलिए कही हैं कि मुझ में तुम्हें पूर्ण शान्ति और भरोसा मिले।” (यूहन्ना अध्याय 16 आयत 33)। प्रभु यीशु ने यह बात अपनी क्रूस पर चढ़ाए जाने से एक

रात पहले कही थी। उन्होंने अभी-अभी अपने चेलों को यह बताने के लिए लम्बी शिक्षा समाप्त की थी कि शीघ्र ही वह उन्हें छोड़कर जाने वाले हैं।

यहाँ स्थान की सीमा के कारण यीशु द्वारा कही गई सभी बातों पर विस्तार से चर्चा करना सम्भव नहीं है। परन्तु इस पुस्तक के विषय से सम्बन्धित एक बात पर ध्यान दो: यीशु ने अपने चेलों से इसलिए बातें कहीं, ताकि उन्हें शान्ति प्रदान करें। और यद्यपि यीशु दो हजार वर्ष पहले स्वर्ग लौट गए, फिर भी वे आज भी अपने अनुयायियों को अपने लिखित वचन के द्वारा शान्ति प्रदान करते हैं। स्मरण रखो, जीवित वचन पवित्रशास्त्र के पृष्ठों के माध्यम से स्वयं को—अपने स्वभाव, अपनी सामर्थ्य, अपनी योजना और अपनी व्यवस्था को—हम पर प्रकट करता है।

मन की शान्ति।

यीशु जो शान्ति प्रदान करते हैं, वह मन की शान्ति है, अर्थात् ऐसे विचलित करने वाले और मन पर बोझ डालने वाले विचारों तथा भावनाओं से स्वतंत्रता। जीवन की परिस्थितियाँ ऐसे परेशान करने वाले विचारों और दुःखदायी भावनाओं को उत्पन्न करती हैं, जो कभी-कभी स्वयं कठिनाई जितनी ही कष्टदायक हो सकती हैं। मन की शान्ति इस मानसिक यातना से उत्पन्न होने वाले दबाव को कम कर देती है। “जब मेरे मन में चिन्ताओं की बहुतायत थी, तब तेरी शान्तिदायक सांत्वनाओं ने मेरे प्राण को आनन्दित और प्रसन्न किया।” (भजन संहिता अध्याय 94 आयत 19)। यहाँ जिस इब्रानी शब्द का अनुवाद “शान्तिदायक सांत्वनाएँ” किया गया है, उसका अर्थ है “करुणा” तथा “सान्त्वना”, अर्थात् दुःख और चिन्ता को हल्का करने वाली सांत्वना।

सर्वशक्तिमान परमेश्वर अपने पवित्र आत्मा के द्वारा, अपने वचन के माध्यम से हमें सान्त्वना प्रदान करता है। पवित्रशास्त्र हमारे मन को यह विश्वास दिलाकर शान्ति प्रदान करता है कि प्रत्येक पीड़ा और प्रत्येक हानि अस्थायी है, और सब कुछ ठीक कर दिया जाएगा—कुछ इस जीवन में और कुछ आने वाले जीवन में। यह दृष्टिकोण तुम्हारी वर्तमान पीड़ा को समाप्त नहीं करता, परन्तु यह तुम्हें आशा देता है और तुम्हारे मानसिक तथा भावनात्मक बोझ को हल्का कर देता है।

अपने लोगों के लिए प्रभु की प्रतिज्ञा मन की शान्ति है। परन्तु यह प्रतिज्ञा एक शर्त पर आधारित है। तुम्हें अपना मन उस पर लगाना है और उसी पर स्थिर रखना है। “जिसका मन तुझ पर स्थिर है, उसकी तू पूर्ण शान्ति के साथ रक्षा करेगा, क्योंकि वह तुझ पर भरोसा रखता है।” (यशायाह अध्याय 26 आयत 3)।

अब तक हमने जिन बातों पर विचार किया है, उन्हें मत भूलो। तुम परमेश्वर के लिखित वचन के द्वारा अपना ध्यान उस पर स्थिर रखते हो। यदि तुम नहीं जानते कि उसका वचन क्या कहता है, तो तुम अपने विचारों को उस पर स्थिर नहीं रख सकते। और यदि तुम पवित्रशास्त्र का नियमित अध्ययन नहीं करते, तो तुम यह जान ही नहीं सकते कि उसका वचन क्या कहता है।

परमेश्वर के वचन से मिलने वाला आनन्द।

यद्यपि जब हम किसी ऐसी बात का सामना करते हैं जो हमें प्रसन्नता और सन्तोष देती है, तब हमारे भीतर सुखद और आनन्दपूर्ण भावनाएँ उत्पन्न होती हैं, फिर भी एक ऐसा आनन्द भी है जो परिस्थितियों पर निर्भर नहीं करता। यह आनन्द ऐसी सामर्थ्य है जो परमेश्वर के वचन से प्राप्त होने वाले ज्ञान पर आधारित होती है, और यह तुम्हें पीड़ादायक परीक्षाओं के बीच भी सम्भाले रखती है। “यदि तेरा वचन मेरा परम आनन्द न होता, तो मैं अपने दुःख में नष्ट हो गया होता।” (भजन संहिता अध्याय 119 आयत 92)।

पुराने नियम के भविष्यद्वक्ता यिर्मयाह ने प्रभु की सेवा करते हुए अनेक कठिनाइयों का सामना किया, जिनमें अस्वीकृति, झूठे आरोप और कारावास भी सम्मिलित थे। फिर भी यिर्मयाह ने कहा कि उसने परमेश्वर के वचनों को ग्रहण किया, और उन्होंने उसके भीतर आनन्द उत्पन्न किया। “तेरे वचन मुझे प्राप्त हुए, और मैंने उन्हें ग्रहण किया; तेरे वचन मेरे लिए हर्ष और मेरे हृदय का आनन्द बन गए।” (यिर्मयाह अध्याय 15 आयत 16)।

पवित्रशास्त्र एक अलौकिक पुस्तक है, और जो लोग मनन और गम्भीर चिन्तन के द्वारा उसके वचनों को अपने भीतर ग्रहण करते हैं, उनके जीवन में यह प्रभाव उत्पन्न करती है। सम्भव है तुम्हें स्मरण हो कि यीशु ने परमेश्वर के वचन की तुलना भोजन से की थी (मती अध्याय 4 आयत 4)। यीशु का यह उदाहरण हमें समझने में सहायता करता है कि पवित्रशास्त्र किस प्रकार कार्य करता है। जैसे भोजन को ग्रहण करने पर वह हमारे शरीर में वृद्धि और परिवर्तन उत्पन्न करता है, वैसे ही परमेश्वर का वचन भी हमारे भीतर परिवर्तन लाता है। यिर्मयाह के जीवन में प्रभु के वचन ने उसके भीतर आनन्द उत्पन्न किया।

सम्भवतः तुम पवित्रशास्त्र के इस प्रसिद्ध वचन से परिचित हो: “शोक मत करो, क्योंकि यहोवा का आनन्द तुम्हारी सामर्थ्य है।” (नहेमायाह अध्याय 8 आयत 10) जब हम इस कथन के सन्दर्भ को पढ़ते हैं, तो हमें पता चलता है कि यह सामर्थ्य देने वाला आनन्द परमेश्वर के लिखित वचन को जानने और समझने से प्राप्त होता है। और जैसा कि मैंने इस पूरी पुस्तक में बार-बार कहा है, पवित्रशास्त्र की समझ परिचय से आती है, और परिचय नियमित तथा क्रमबद्ध अध्ययन से प्राप्त होता है।

आशा में आनन्दित रहो।

नए नियम में जिस यूनानी शब्द का सबसे अधिक अनुवाद “आनन्द” और “आनन्दित होना” के रूप में किया गया है, उसका अर्थ है “प्रसन्नचित्त बने रहना”, न कि केवल “प्रसन्नता का अनुभव करना।” क्या तुमने कभी किसी खेल प्रतियोगिता में किसी का उत्साह बढ़ाया है, या किसी कठिन परिस्थिति से गुजर रहे व्यक्ति को प्रोत्साहित करने का प्रयास किया है? तुमने क्या किया? तुमने उसे आगे बढ़ते रहने के लिए प्रोत्साहित किया और उसे स्मरण कराया कि उसके पास अपनी दौड़ पूरी करने की सामर्थ्य है। तुमने उसे विश्वास दिलाया कि वह जिस परिस्थिति का सामना कर रहा है, उससे सुरक्षित निकल जाएगा और उसके आगे अच्छे दिन उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। दूसरे शब्दों में, तुमने अपने शब्दों के द्वारा उसका उत्साह बढ़ाया।

पौलुस ने, जिन अनेक परीक्षाओं और कठिनाइयों का उसने सामना किया, उनके सन्दर्भ में लिखा कि वह “दुःखी तो है, परन्तु सदा आनन्दित रहता है” (2 कुरिन्थियों अध्याय 6 आयत 10)। यद्यपि अपनी कठिनाइयों के कारण वह दुःख का अनुभव करता था, फिर भी वह परमेश्वर के वचन के द्वारा अपना उत्साह बढ़ाता था, और उसी से उसे सामर्थ्य तथा स्थिरता प्राप्त होती थी। पौलुस ने यह भी लिखा, “आशा में आनन्दित रहो।” (रोमियों अध्याय 12 आयत 12)। ध्यान दो कि उसने यह नहीं कहा कि आनन्द का अनुभव करो। स्मरण रखो, यही वही पौलुस है जिसने अपनी अनेक कठिनाइयों को क्षणिक और हल्का कहा था, क्योंकि उसने अपनी दृष्टि उन पर नहीं, बल्कि उस पर लगाई थी जिसे वह अभी अपनी आँखों से नहीं देख सकता था (2 कुरिन्थियों अध्याय 4 आयत 17 से 18)। परमेश्वर के वचन ने उसे वर्तमान सहायता और भविष्य की पुनर्स्थापना का दृढ़ आश्वासन दिया था।

जब तुम परमेश्वर के कहे हुए वचनों को स्मरण करते हो और उसके वचन के द्वारा स्वयं को प्रोत्साहित करते हो, तब भविष्य के प्रति आनन्द और उत्साह तुम्हारे भीतर उत्पन्न होता है। यही तुम्हें मन की शान्ति के साथ जीवन के तूफानों का सामना करने की सामर्थ्य देता है।

“उसी [यीशु] के द्वारा हमें विश्वास के कारण उस अनुग्रह तक पहुँच प्राप्त हुई, जिसमें हम स्थिर हैं; और हम उस महिमा की आशा में आनन्दित होते हैं, जिसे परमेश्वर हमें प्रदान करेगा। इतना ही नहीं, हम क्लेशों में भी आनन्दित होते हैं।” (रोमियों अध्याय 5 आयत 2 से 3)



जब हम परमेश्वर के वचन के द्वारा अपना स्वयं का उत्साह बढ़ाना और स्वयं को प्रोत्साहित करना सीख जाते हैं, तब उसकी सामर्थ्य हमें सम्भालने के लिए हमारे भीतर कार्य करने लगती है। मन का आनन्द और शान्ति हमें तब प्राप्त होते हैं, जब हम उसके वचन का नियमित अध्ययन करके आशा के परमेश्वर को अधिक गहराई से जानने लगते हैं।



आइए, पढ़ने के लिए तैयार हों।

आशा है कि अब तक मैंने जो कुछ कहा है, उसने आपकी रुचि जगा दी होगी और आप मेरी इस चुनौती को स्वीकार करने पर विचार कर रहे होंगे कि नए नियम को आरम्भ से अंत तक बार-बार पढ़ें। फिर भी, मुझे आपको पहले ही सावधान कर देना चाहिए कि जैसे ही आप पहला पृष्ठ खोलेंगे, आपको तुरंत सोलह आयतों में वंशावली मिलेगी: “इब्राहीम से इसहाक उत्पन्न हुआ; इसहाक से याकूब उत्पन्न हुआ; और याकूब से यहूदा उत्पन्न हुआ,” और इसी प्रकार आगे भी चलता है (मती अध्याय 1 आयत 2)। परिणामस्वरूप, नियमित और व्यवस्थित रूप से पढ़ने का आपका पहला प्रयास ही शायद अंतिम बन जाए। यह प्राचीन वंशावली न केवल अपरिचित नामों के कारण पढ़ने में कठिन प्रतीत होती है, बल्कि पहली दृष्टि में इसका आधुनिक जीवन से कोई संबंध भी दिखाई नहीं देता। परन्तु यदि आप पहली शताब्दी के ऐसे यहूदी होते जो इस्राएल देश में रहते थे, तो यह वंशावली आपको अत्यन्त रोचक और आकर्षक लगती।

वास्तव में यह सूची यीशु की वंशावली है। यदि आप प्रतिज्ञा किए गए मसीह (उद्धारकर्ता) की प्रतीक्षा करने वाले एक श्रद्धालु यहूदी होते, तो आप जानते कि पुराने नियम के भविष्यद्वक्ताओं के अनुसार मसीह का इब्राहीम और दाऊद दोनों का वंशज होना आवश्यक था। और जब आप यीशु की वंशावली में देखते कि वे वास्तव में इन दोनों पुरुषों के वंश से हैं, तो यह नामों की पूरी सूची आपके लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण और मन को बाँध लेने वाली होती। नए नियम का यह भाग वास्तव में पहली शताब्दी के यहूदियों को यह सिद्ध करने के लिए लिखा गया था कि यीशु वही उद्धारकर्ता हैं जिनके विषय में पुराने नियम के भविष्यद्वक्ताओं ने भविष्यवाणी की थी। जब आप यह बात समझ लेते हैं, तब नए नियम के आरम्भ में इस विस्तृत वंशावली का दिया जाना पूरी तरह अर्थपूर्ण प्रतीत होता है।

अगले कुछ अध्यायों में मैं नए नियम की कुछ मूलभूत पृष्ठभूमि संबंधी जानकारी आपके साथ साझा करूँगा, जो आपके अध्ययन को अधिक सफल और लाभदायक बनाने में सहायता करेगी।

नए नियम से ही शुरुआत क्यों करें?

आपके नियमित बाइबल अध्ययन की शुरुआत नए नियम से करने के पीछे कुछ व्यावहारिक कारण हैं। पहला, नया नियम पुराने नियम की तुलना में बहुत छोटा है। याद रखिए, बाइबल की समझ परिचय के साथ बढ़ती है, और परिचय नियमित तथा बार-बार पढ़ने से आता है। यदि आप छोटे भाग से शुरुआत करेंगे, तो इस प्रयास में सफल होने की संभावना अधिक होगी। दूसरा, बाइबल परमेश्वर के क्रमिक प्रकाशन का लेखा-जोखा है। पवित्रशास्त्र के पन्नों के माध्यम से परमेश्वर ने धीरे-धीरे अपने परिवार के लिए अपनी योजना प्रकट की, जब तक कि उसका पूर्ण प्रकाशन यीशु मसीह में नहीं हो गया। पुराने नियम को तब अधिक अच्छी तरह समझा जा सकता है जब उसे नए नियम के अधिक पूर्ण प्रकाश के माध्यम से देखा जाए।

एक सुसंगठित पुस्तक।

बाइबल लगभग 1,500 वर्षों की अवधि (लगभग 1400 ईसा पूर्व से 100 ईस्वी तक) में 40 से अधिक लेखकों द्वारा लिखी गई। फिर भी इसमें ऐसी अद्भुत एकता और निरंतरता है, जो इसकी पहली पुस्तक से लेकर अंतिम पुस्तक तक स्पष्ट दिखाई देती है। आरम्भ से अंत तक, बाइबल अंततः यीशु मसीह का प्रकाशन है—वही जिसके द्वारा परमेश्वर ने अपना परिवार प्राप्त किया (यूहन्ना अध्याय 5 आयत 39)। जैसा कि मैंने अध्याय 3 में बताया था, पुराना नियम मुख्यतः इस्राएल राष्ट्र का इतिहास है, वही जाति जिसके माध्यम से यीशु इस संसार में आए। इतिहास के अतिरिक्त, पुराने नियम में यीशु के विषय में अनेक भविष्यवाणियाँ भी हैं, साथ ही ऐसी घटनाएँ और व्यक्ति भी हैं जिन्हें “प्रतिरूप” और “छाया” कहा जाता है। प्रतिरूप और छाया वास्तविक व्यक्ति तथा वास्तविक घटनाएँ हैं, परन्तु वे प्रतिज्ञा किए गए उद्धारकर्ता का प्रतिनिधित्व भी करती हैं और उनके आने का पूर्वसंकेत भी देती हैं (कुलुस्सियों अध्याय 2 आयत 17; इब्रानियों अध्याय 10 आयत 1)। नया नियम उस बात की पूर्णता का अभिलेख है जिसकी ओर पुराने नियम की भविष्यवाणियाँ तथा प्रतिरूप संकेत करते थे और जिसकी भविष्यवाणी करते थे—अर्थात् यीशु का आगमन, ताकि वे पाप का मूल्य चुका दें और परमेश्वर के परिवार का उद्धार करें।

इतने सारे अपरिचित नाम क्यों हैं?

बाइबल पढ़ना कुछ हद तक इसलिए कठिन लगता है क्योंकि इसकी घटनाएँ उन स्थानों पर घटित हुई हैं जो हममें से बहुतों के लिए अपरिचित हैं। पवित्रशास्त्र उन घटनाओं का वर्णन करता है जो कई हजार वर्ष पहले मध्य पूर्व में, मुख्य रूप से इस्राएल देश में घटी थीं। इक्कीसवीं शताब्दी के पाठकों के लिए न केवल वहाँ का भूगोल और स्थानों के नाम अपरिचित हैं, बल्कि अनेक सांस्कृतिक संदर्भ भी रहस्यमय प्रतीत होते हैं। मूर्तिपूजा और लहू के बलिदानों की बातें हमें, विशेषकर पश्चिमी संसार में रहने वालों को, अपने जीवन से असंबंधित लगती हैं। आधुनिक पाठक यह भी सोचते हैं कि उनके अपने देश का उल्लेख बाइबल में क्यों नहीं है। इसका कारण यह नहीं कि परमेश्वर इस्राएल के अतिरिक्त अन्य स्थानों की परवाह नहीं करते, या यह कि उनके परिवार की योजना केवल मध्य पूर्व के लोगों के लिए ही है। बल्कि, परमेश्वर का वचन उद्धार के इतिहास का अभिलेख है। यह उन लोगों और घटनाओं का वर्णन करता है जिनका सीधा संबंध उस योजना से था जिसके द्वारा परमेश्वर यीशु के माध्यम से संसार का उद्धार करने वाले थे। वे लोग मध्य पूर्व में रहते थे और वे घटनाएँ भी वहीं घटी थीं।

जब आप इन भौगोलिक और सांस्कृतिक चुनौतियों से परिचित हो जाते हैं और समझ लेते हैं कि वे क्यों हैं, तब किसी अपरिचित शब्द या रीति-रिवाज का सामना होने पर आपके पढ़ना छोड़ देने की संभावना बहुत कम रह जाती है। और जैसे-जैसे आप नियमित रूप से बाइबल पढ़ते रहेंगे, वैसे-वैसे उसका पाठ आपके लिए अधिक परिचित होता जाएगा। तब आप समझने लगेंगे कि कुछ शब्द संभवतः व्यक्तियों या स्थानों के नाम हैं, और जो बातें पहली नज़र में अजीब लगती हैं, वे उस समय के लोगों के लिए सामान्य रीति-रिवाजों का उल्लेख हैं। याद रखिए, बाइबल वास्तविक लोगों द्वारा वास्तविक लोगों के लिए लिखी गई थी, ताकि उन्हें महत्वपूर्ण और लाभदायक सत्य बताए जा सकें। जब उसके लेखकों ने लिखा, तब उन्होंने वही भाषा प्रयोग की जिसे उनके पाठक भली-भाँति समझते थे। इसलिए उसमें ऐसे अलंकार, मुहावरे और अभिव्यक्तियाँ मिलती हैं जिन्हें हम आज सहज रूप से नहीं पहचानते और जो हमें तुरंत समझ में नहीं आतीं। परन्तु ये अपरिचित शब्द और कथन उन प्रथम पाठकों के लिए पूरी तरह स्पष्ट और अर्थपूर्ण थे।

इनमें से कोई भी बात ऐसी नहीं है जिसे समझा न जा सके। जैसा कि मैं पहले भी कह चुका हूँ, नियमित और बार-बार पढ़ना इन बातों को धीरे-धीरे स्पष्ट कर देता है। एक अच्छा बाइबल शिक्षक भी इस यात्रा में अत्यन्त मूल्यवान होता है। इसके अतिरिक्त, आपकी सहायता के लिए अनेक उपयोगी साधन उपलब्ध हैं, जैसे बाइबल शब्दकोश, टीकाएँ और अध्ययन बाइबल, जिनमें व्याख्यात्मक टिप्पणियाँ दी गई होती हैं। फिर भी यह बात सदैव

स्मरण रखें कि इन साधनों का उद्देश्य नियमित बाइबल अध्ययन का स्थान लेना नहीं है। इन्हें नियमित अध्ययन के साथ-साथ सहायक साधनों के रूप में उपयोग किया जाना चाहिए।

मुझे कौन-सा अनुवाद उपयोग करना चाहिए?

लोग अक्सर मुझसे पूछते हैं कि जब वे बाइबल पढ़ना आरम्भ करें, तो उन्हें कौन-सा अनुवाद पढ़ना चाहिए। इस विषय पर सच्चे मसीहियों के बीच भी कभी-कभी बहुत गंभीर चर्चा और मतभेद होते हैं कि कौन-सा अनुवाद अधिक श्रेष्ठ है। इस विषय की पूरी चर्चा करने के लिए एक अलग पुस्तक की आवश्यकता होगी, परन्तु अभी के लिए कुछ महत्वपूर्ण बातों पर विचार कीजिए।

- अनुवाद आवश्यक हैं क्योंकि पुराना नियम मूल रूप से इब्रानी भाषा में और नया नियम यूनानी भाषा में लिखा गया था। अधिकांश लोग न तो इब्रानी जानते हैं और न ही यूनानी। यदि बाइबल के अनुवाद उपलब्ध न होते, तो हममें से अधिकांश लोग बाइबल पढ़ ही नहीं सकते।

- कुछ लोग गलती से यह समझते हैं कि किंग जेम्स बाइबल ही मूल बाइबल है। परन्तु वास्तव में वह भी एक अनुवाद ही है, जिसे इंग्लैंड के राजा जेम्स प्रथम के आदेश पर तैयार किया गया था और जो सन् 1611 ईस्वी में पूरा हुआ।

- बाइबल का अनुवाद करना एक अत्यन्त जटिल कार्य है, क्योंकि कोई भी दो भाषाएँ पूरी तरह एक जैसी नहीं होतीं। उदाहरण के लिए, यूनानी भाषा में प्रेम के लिए चार अलग-अलग शब्द हैं, जिनमें से प्रत्येक का अर्थ और भाव अलग है। जबकि हिन्दी में सामान्यतः प्रेम के लिए एक ही मुख्य शब्द का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार, विभिन्न भाषाओं में वाक्य के अंगों का क्रम भी अलग-अलग होता है, और प्रत्येक भाषा के अपने मुहावरे तथा अलंकारिक अभिव्यक्तियाँ होती हैं।

- पवित्रशास्त्र का अनुवाद करने वाले विद्वान सामान्यतः दो प्रमुख पद्धतियों का उपयोग करते हैं—शब्दशः अनुवाद और भावानुवाद। दोनों का अपना-अपना महत्व है। प्रत्येक स्थिति में अनुवादकों को मूल शब्दों के अर्थ और मूल विचारों के प्रति विश्वासयोग्य बने रहना होता है, साथ ही यह भी सुनिश्चित करना होता है कि अनुवाद सहज और पढ़ने में सुगम रहे।

तो फिर आपको कौन-सा अनुवाद पढ़ना चाहिए? वही अनुवाद पढ़िए जिसे आप अच्छी तरह समझ सकें, जिसकी भाषा आपके लिए सबसे अधिक सरल और स्पष्ट हो। मेरे प्रिय अनुवादों में इंग्लिश स्टैंडर्ड वर्शन और न्यू लिविंग ट्रांसलेशन शामिल हैं। किसी पद या अनुच्छेद को कई अलग-अलग अनुवादों में पढ़ने से उसके अर्थ को और गहराई से समझने में सहायता मिल

सकती है। फिर भी, ऐसा अपने नियमित और क्रमबद्ध बाइबल अध्ययन के समय के अतिरिक्त किसी अन्य समय पर करना अधिक उचित है।



मेरा विश्वास है कि इस अध्याय में दी गई जानकारी आपको प्रोत्साहित करेगी कि आप धैर्यपूर्वक बने रहें और बाइबल पढ़ने के आरम्भिक कठिनाइयों का सामना करते हुए आगे बढ़ते रहें। जब आप यह समझेंगे कि नए नियम को किसने लिखा और क्यों लिखा, तब आपके भीतर इसे निरंतर पढ़ते रहने की और भी अधिक प्रेरणा उत्पन्न होगी। आइए, अगले अध्याय में इसी विषय पर विचार करें।



वे पुरुष जिन्होंने नया नियम लिखा।

क्या आप यीशु को और अधिक गहराई से जानना चाहते हैं तथा उनके साथ और भी निकट का संबंध विकसित करना चाहते हैं? ऐसा करने का सबसे उत्तम मार्ग है कि आप बाइबल के नियमित पाठक बन जाएँ। यदि आपके पास नया नियम है, तो आपके हाथों में उन प्रत्यक्षदर्शियों के लिखे हुए वृत्तांत हैं, जो उस समय यीशु मसीह के साथ चले-फिरे और उनसे बातचीत करते थे, जब वे इस पृथ्वी पर थे। उन्होंने ऐसी घटनाओं को अपनी आँखों से देखा जिन्होंने उनके जीवन को बदल दिया, और उन्होंने जो कुछ देखा और सुना, उसे संसार के सामने घोषित करने के लिए लिख डाला।

यीशु के प्रत्यक्षदर्शी।

पवित्र आत्मा की प्रेरणा से आठ व्यक्तियों ने नए नियम के सत्ताईस ग्रंथों की रचना की। ये लेखक हैं—मत्ती, मरकुस, लूका, यूहन्ना, पौलुस, याकूब, पतरस और यहूदा। इन लेखकों में से कुछ स्वयं यीशु के प्रत्यक्षदर्शी थे, जबकि अन्य ने उन प्रत्यक्षदर्शियों की गवाही के आधार पर लिखा जिनसे उन्होंने जानकारी प्राप्त की थी।

- मत्ती, यूहन्ना और पतरस यीशु के पहले बारह प्रेरितों में से थे। प्रभु ने उन्हें अपनी सार्वजनिक सेवकाई के आरम्भ में ही चुन लिया था। इन लोगों ने तीन वर्षों से अधिक समय तक निरंतर यीशु के साथ रहकर उनके निकट संगति की। उन्होंने न केवल यीशु की सेवकाई को देखा और उसमें भाग लिया, यहाँ तक कि उनके क्रूस पर चढ़ाए जाने तक सब कुछ अपनी आँखों से देखा, बल्कि उनके मरे हुआँ में से जी उठने के बाद भी उन्हें जीवित देखा (मत्ती अध्याय 10 आयत 2 से 4)।

- मरकुस मूल बारह प्रेरितों में से नहीं था, परन्तु वह उस समय यरूशलेम नगर में रहता था जब यीशु वहाँ सेवकाई कर रहे थे, और संभव है कि उसने मंदिर में प्रभु की शिक्षा भी सुनी हो। बाद में किसी समय वह विश्वासी बना, सम्भवतः पतरस के प्रभाव के द्वारा। इसके

पश्चात् वह प्रेरित पौलुस का सेवकाई में सहभागी बन गया (1 पतरस अध्याय 5 आयत 13; कुलुस्सियों अध्याय 4 आयत 10; प्रेरितों के काम अध्याय 12 आयत 25)।

- पौलुस प्रारम्भ में मसीहियों का अत्यन्त उत्साही सताने वाला था। जब वह सीरिया के दमिश्क नगर में वहाँ के मसीहियों को पकड़ने के लिए जा रहा था, तब पुनर्जीवित प्रभु यीशु मसीह उसके सामने प्रकट हुए, और उसी समय वह विश्वासी बन गया। इसके बाद भी प्रभु कई बार पौलुस पर प्रकट हुए और जिस संदेश का उसने प्रचार किया तथा लिखा, वह स्वयं प्रभु ने उसे सिखाया (प्रेरितों के काम अध्याय 9 आयत 1 से 6; प्रेरितों के काम अध्याय 26 आयत 15 और 16; गलतियों अध्याय 1 आयत 11 और 12)।

- लूका स्वयं यीशु का प्रत्यक्षदर्शी नहीं था और सम्भवतः वह एक अन्यजाति का व्यक्ति था। उसके मसीह में विश्वास करने के विषय में हमारे पास बहुत कम जानकारी है। बाद में उसकी भेंट पौलुस से हुई और वह उसकी मिशनरी यात्राओं में उसके साथ गया। लूका ने अपने लेखन के लिए गहन शोध किया और अनेक ऐसे लोगों से बातचीत की जिन्होंने स्वयं यीशु के साथ समय बिताया था (लूका अध्याय 1 आयत 1 से 4; प्रेरितों के काम अध्याय 1 आयत 3)।

- याकूब और यहूदा यीशु के सौतेले भाई थे। क्रूस पर चढ़ाए जाने से पहले वे प्रभु के अनुयायी नहीं थे। वास्तव में, इन दोनों भाइयों का यह विश्वास था कि यीशु अपना मानसिक संतुलन खो चुके हैं। परन्तु जब उनके भाई मरे हुआओं में से फिर जीवित हो गए, तब वे दोनों उन पर विश्वास करने लगे (मत्ती अध्याय 13 आयत 55; मरकुस अध्याय 3 आयत 21; यूहन्ना अध्याय 7 आयत 5; गलतियों अध्याय 1 आयत 19; 1 कुरिन्थियों अध्याय 15 आयत 7)।

एक जीवन-परिवर्तनकारी संदेश की घोषणा।

जिस दिन यीशु मरे हुआओं में से जी उठे, उसी दिन उनके पहले प्रेरित और अन्य अनुयायी एक कमरे में एकत्र थे। तभी प्रभु अचानक उनके बीच प्रकट हुए। वे बहुत डर गए, क्योंकि उन्हें लगा कि वे किसी भूत को देख रहे हैं। परन्तु यीशु ने उन्हें आश्वस्त किया कि वे भूत नहीं हैं। उन्होंने कहा, “तुम क्यों घबरा रहे हो? और तुम्हारे मन में ऐसे संदेह क्यों उठ रहे हैं? मेरे हाथों और मेरे पैरों को देखो। तुम स्वयं देख सकते हो कि यह वास्तव में मैं ही हूँ। मुझे छूकर देखो और निश्चय कर लो, क्योंकि भूत के हाड़-माँस नहीं होते, जैसे तुम मुझमें देख रहे हो” (लूका अध्याय 24 आयत 38 और 39)।

इसके बाद यीशु ने उनसे खाने के लिए कुछ माँगा, और उन्होंने देखा कि उन्होंने भूनी हुई मछली का एक टुकड़ा खाया। फिर प्रभु ने पुराने नियम के पवित्रशास्त्रों के द्वारा उन्हें

समझाया कि अपनी मृत्यु और पुनरुत्थान के माध्यम से उन्होंने क्या पूरा किया है और उसका क्या महत्व है। उन्होंने बताया कि अब जो कोई उन पर विश्वास करेगा, उसके लिए पापों से उद्धार उपलब्ध है। इसके बाद उन्होंने अपने प्रेरितों को यह आदेश दिया कि वे जाकर संसार को उन सब बातों की गवाही दें जिन्हें उन्होंने अपनी आँखों से देखा और अपने कानों से सुना था (लूका अध्याय 24 आयत 45 से 48)।

इन लोगों ने अपना शेष जीवन यीशु और उनके पुनरुत्थान का प्रचार करने में समर्पित कर दिया। प्रेरितों को जो कुछ उन्होंने देखा और सुना था, उस पर इतना अटल विश्वास था कि उन्होंने कठोर से कठोर सताव और मृत्यु का सामना करने पर भी उसका इन्कार करने से इनकार कर दिया।

संदेश का प्रचार।

यीशु के प्रथम अनुयायियों का उद्देश्य कोई धार्मिक पुस्तक लिखना नहीं था। आरम्भ में प्रेरितों ने अपने संदेश का प्रचार मौखिक रूप से किया, क्योंकि वे ऐसे समाज में रहते थे जहाँ ज्ञान और परम्पराएँ मुख्य रूप से बोलकर एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाई जाती थीं। उस समय आधे से भी कम लोग पढ़-लिख सकते थे, और पुस्तकें, जो उस समय प्रायः चर्मपत्र या पत्रों के स्क्रॉल के रूप में होती थीं, बहुत दुर्लभ और तैयार करने में अत्यन्त महँगी थीं। इसलिए लोग बातों को स्मरण रखते थे और उन्हें मौखिक रूप से दूसरों तक पहुँचाते थे। यहूदी शिक्षक, जिन्हें रब्बी कहा जाता था, पूरे पुराने नियम को कंठस्थ रखने के लिए प्रसिद्ध थे। मौखिक रूप से सुनाई जाने वाली कथाओं में विशेष साहित्यिक शैली और स्मरण-सहायक विधियों का प्रयोग किया जाता था, जिससे उन्हें याद रखना और दूसरों को ठीक प्रकार से सुनाना अधिक सरल हो जाता था।

यह अत्यन्त सम्भावित है कि जब यीशु अपने चेलों के साथ थे, तब उनके चेलों ने उनकी कही हुई बहुत-सी बातों और शिक्षाओं को कंठस्थ कर लिया था। स्मरण रखना उस समय की सामान्य सांस्कृतिक परम्परा थी, और इसके अतिरिक्त वे यीशु के प्रत्येक वचन पर विशेष ध्यान देने के लिए प्रेरित भी थे, क्योंकि वे विश्वास करते थे कि वही प्रतिज्ञा किए गए उद्धारकर्ता हैं। जिन तीन वर्षों तक वे यीशु के साथ रहे, उस दौरान उन्होंने अनेक बार उनके उपदेश सुने, क्योंकि यीशु इस्राएल के विभिन्न नगरों और गाँवों में जाकर अपना संदेश सुनाते थे। और जिस रात यीशु को क्रूस पर चढ़ाया जाना था, उससे पहले उन्होंने अपने प्रेरितों से प्रतिज्ञा की कि वे अपने आत्मा, अर्थात् पवित्र आत्मा को भेजेंगे, जो उनमें वास करेगा और उन्हें उनकी सभी शिक्षाओं का स्मरण कराएगा। “परन्तु सहायक अर्थात् पवित्र आत्मा, जिसे पिता मेरे नाम से भेजेंगे, वही तुम्हें सब बातें सिखाएगा और जो कुछ मैंने तुमसे कहा है, वह सब तुम्हें स्मरण कराएगा” (यूहन्ना अध्याय 14 आयत 26)।

एक स्वाभाविक विकास।

जब प्रेरित मसीह पर विश्वास के द्वारा पापों से उद्धार के सुसमाचार का प्रचार करने के लिए निकल पड़े, तब विश्वासियों के समुदाय, अर्थात् कलीसियाएँ, स्थापित होने लगीं। जब प्रेरित अन्य नगरों और स्थानों में आगे बढ़ गए, तब उन्होंने इन नई स्थापित कलीसियाओं के साथ पत्रियों के माध्यम से संपर्क बनाए रखा। यद्यपि इन पत्रियों को प्रायः पत्र कहा जाता है, वास्तव में वे उपदेशों के समान हैं। इन पत्रियों में यह समझाया गया है कि मसीही क्या विश्वास करते हैं और उन्हें किस प्रकार का जीवन जीना चाहिए। ये लिखित उपदेश इस उद्देश्य से लिखे गए थे कि उन्हें लोगों के समूहों के सामने ऊँचे स्वर में पढ़कर सुनाया जाए। जब कोई पत्री किसी विश्वासी समुदाय तक पहुँचती थी, तब उसकी प्रतिलिपियाँ बनाई जाती थीं और उन्हें अन्य विश्वासियों के समूहों तक भी पहुँचाया जाता था। नए नियम के प्रारम्भिक ग्रंथ उसी आज्ञा का स्वाभाविक परिणाम थे जो यीशु ने अपने प्रेरितों को दी थी। जब कोई प्रेरित स्वयं उपस्थित होकर शिक्षा नहीं दे सकता था, तब उसकी पत्री उसके स्थान पर वही कार्य करती थी।

सुसमाचार कुछ समय बाद लिखे गए ताकि उन प्रत्यक्षदर्शियों की गवाही को सुरक्षित रखा जा सके जिनका यीशु के साथ प्रत्यक्ष संबंध था। वे ऐसे चित्रों के समान हैं जो यीशु के जीवन, उनकी मृत्यु और उनके पुनरुत्थान का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करते हैं, और उनका उद्देश्य यह था कि जो लोग उन्हें सुनें या पढ़ें, उनके भीतर विश्वास उत्पन्न हो। जब कोई प्रेरित या प्रत्यक्षदर्शी किसी नगर में आता था और मौखिक रूप से अपनी गवाही सुनाता था, तब नए विश्वासी केवल उसी मौखिक गवाही से संतुष्ट नहीं होना चाहते थे। वे उस गवाही का लिखित अभिलेख भी चाहते थे। इन लिखित ग्रंथों ने न केवल प्रत्यक्षदर्शियों की गवाही को सुरक्षित रखा, बल्कि प्रेरितों की सेवकाई की पहुँच को भी अत्यन्त व्यापक बना दिया, क्योंकि उनकी प्रतिलिपियाँ बनाकर अनेक स्थानों पर भेजी जा सकती थीं। इसके अतिरिक्त, जब मूल प्रत्यक्षदर्शी एक-एक करके इस संसार से विदा होने लगे, तब उनकी गवाही इन लिखित ग्रंथों के माध्यम से सुरक्षित बनी रही।

वास्तविक लोग, वास्तविक परिस्थितियाँ।

नए नियम के ये ग्रंथ वास्तविक लोगों द्वारा अन्य वास्तविक लोगों के लिए लिखे गए थे, जिन्होंने अपने जीवन को यीशु मसीह के प्रति समर्पित कर दिया था। इन लेखकों ने रविवार की पाठशाला के लिए कहानियाँ लिखने के उद्देश्य से नहीं लिखा था। उन्होंने मसीह में अपने विश्वास और मसीही जीवन से जुड़े वास्तविक प्रश्नों और परिस्थितियों के विषय में लिखा। उन्होंने इसलिए लिखा ताकि विश्वासियों को यह आश्वासन मिल सके कि यीशु के विषय में उन्होंने जो कुछ उनसे सुना है, वह पूर्णतः विश्वासयोग्य है।

• अपनी एक पत्री में पतरस लिखते हैं: “जब हमने तुम्हें अपने प्रभु यीशु मसीह की सामर्थ्य और उनके फिर आने के विषय में बताया, तब हमने कोई चतुराई से गढ़ी हुई कहानियों का सहारा नहीं लिया था, बल्कि हम स्वयं उनकी महिमा के प्रत्यक्षदर्शी थे। क्योंकि जब उन्हें परमेश्वर पिता से आदर और महिमा प्राप्त हुई, तब परमप्रतापी महिमा की ओर से उनके लिए यह वाणी आई, ‘यह मेरा प्रिय पुत्र है, जिससे मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ।’ और जब हम उनके साथ उस पवित्र पर्वत पर थे, तब हमने स्वयं स्वर्ग से आई हुई यह वाणी सुनी” (2 पतरस अध्याय 1 आयत 16 से 18)।

• अपनी एक पत्री में यूहन्ना लिखते हैं: “जो आदि से था, जिसे हमने सुना है, जिसे अपनी आँखों से देखा है, जिसे ध्यानपूर्वक देखा और अपने हाथों से छुआ है, उसी जीवन के वचन के विषय में हम तुम्हें बताते हैं... हम तुम्हें वही सुनाते हैं जिसे हमने स्वयं देखा और सुना है” (1 यूहन्ना अध्याय 1 आयत 1 से 3)।

• यीशु के जीवन, मृत्यु और पुनरुत्थान का अपना विवरण समाप्त करते हुए यूहन्ना लिखते हैं: “यीशु ने अपने चेलों के सामने और भी बहुत से चिन्ह किए, जो इस पुस्तक में नहीं लिखे गए हैं। परन्तु ये इसलिए लिखे गए हैं कि तुम विश्वास करो कि यीशु ही मसीह, परमेश्वर के पुत्र हैं, और विश्वास करके उनके नाम से जीवन पाओ” (यूहन्ना अध्याय 20 आयत 30 और 31)।

• लूका, जो यीशु में नए विश्वास करने वाले एक व्यक्ति को लिख रहे थे, अपनी पुस्तक का आरम्भ इन शब्दों से करते हैं: “जब मैंने आरम्भ से ही इन सब प्रत्यक्षदर्शियों के विवरणों की सावधानीपूर्वक जाँच-पड़ताल कर ली, तब मैंने भी उचित समझा कि तुम्हारे लिए इन सब बातों का क्रमबद्ध विवरण लिखूँ, ताकि जिन बातों की शिक्षा तुम्हें दी गई है, उनकी सच्चाई का तुम्हें पूरा विश्वास हो जाए” (लूका अध्याय 1 आयत 3 और 4)।

इस पुस्तक के अंत में आपको नए नियम के प्रत्येक ग्रंथ का एक संक्षिप्त परिचय मिलेगा, जो आपको यह समझने में और अधिक सहायता देगा कि प्रत्येक ग्रंथ क्यों लिखा गया था (पृष्ठ 87 से 101)।



जैसा कि मैंने इस अध्याय के आरम्भ में कहा था, यीशु को गहराई से जानने का इससे बेहतर कोई मार्ग नहीं है कि आप उन ग्रंथों से भली-भाँति परिचित हो जाएँ जिन्हें उन लोगों ने लिखा, जो स्वयं प्रभु यीशु के साथ चले-फिरे, उनसे बातचीत की, और फिर उन्हें मरे हुआँ में से

जी उठकर मृत्यु पर विजय प्राप्त करते हुए अपनी आँखों से देखा। उनके लिखे हुए वचनों का नियमित अध्ययन आपके विश्वास को दृढ़ करेगा और आपको इस सत्य के प्रति और भी अधिक निश्चय प्रदान करेगा कि जिस पर और जिसमें आप विश्वास करते हैं, वह वास्तविक और सत्य है।



क्या हम नए नियम पर विश्वास कर सकते हैं?

हम ऐसे समय में जी रहे हैं जब बहुत-सी आवाज़ें नए नियम की विश्वसनीयता पर प्रश्न उठाती हैं। ऐसे विवादास्पद विचार आपके उस उत्साह को कमज़ोर कर सकते हैं, जो आपको नियमित और क्रमबद्ध रूप से बाइबल पढ़ने के लिए आवश्यक प्रयास करने के लिए प्रेरित करता है। इसलिए आपके लिए यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि आप परमेश्वर की इस अद्भुत पुस्तक की सत्यता और विश्वसनीयता पर पूर्ण भरोसा कर सकते हैं। जब आप यह समझते हैं कि इन ग्रंथों को किसने लिखा और क्यों लिखा, तब यह भी स्पष्ट हो जाता है कि उनके लिए और उनके पाठकों के लिए उनके संदेश का सही रूप में संप्रेषण और संरक्षण कितना महत्वपूर्ण था। नए नियम के सभी लेखकों ने संसार को यह बताने के लिए लिखा कि यीशु मसीह ने अपने पुनरुत्थान के द्वारा मृत्यु पर विजय प्राप्त की, और उनके बलिदान के कारण अब जो कोई उन पर विश्वास करता है, उसके लिए पापों से उद्धार उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त भी अनेक कारण हैं जिनके आधार पर हम नए नियम की सत्यता और विश्वसनीयता पर भरोसा कर सकते हैं।

हमें इसे सही रूप में सुरक्षित रखना था।

संदेश का सही रूप में संप्रेषण और संरक्षण इसलिए अत्यन्त महत्वपूर्ण था क्योंकि ये लोग केवल एक अत्यन्त महत्वपूर्ण संदेश ही नहीं सुना रहे थे, बल्कि वे यह भी जानते थे कि वे ऐसे ग्रंथ लिख रहे हैं जो परमेश्वर की प्रेरणा से लिखे जा रहे हैं (2 पतरस अध्याय 3 आयत 1 और 2; 2 पतरस अध्याय 3 आयत 15 और 16)। वे भली-भाँति समझते थे कि उनका कार्य कितना गंभीर और महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त, यीशु की सेवकाई के समय इस्राएल में हज़ारों लोगों ने या तो उन्हें स्वयं देखा था या उनके विषय में सुना था, क्योंकि वे विभिन्न नगरों और क्षेत्रों में घूम-घूमकर शिक्षा देते थे। इसका अर्थ यह था कि यदि प्रेरितों ने घटनाओं का वर्णन गलत किया होता या उनमें अपनी ओर से मनगढ़ंत बातें जोड़ दी होतीं, तो वहाँ ऐसे बहुत-से लोग उपस्थित थे जो उनकी त्रुटि को पहचान सकते थे और अवश्य उसे

सुधारते। इसलिए उनके लिए यह अत्यन्त आवश्यक था कि वे हर बात को पूरी सत्यता और शुद्धता के साथ प्रस्तुत करें।

क्या बाइबल की पुस्तकों का चयन सिक्का उछालकर किया गया था?

आजकल यह बात बहुत अधिक सुनने में आती है कि नए नियम की पुस्तकों का चयन यीशु के पृथ्वी पर रहने के कई शताब्दियों बाद कलीसियाई सभाओं द्वारा किया गया था, ताकि राजनीतिक उद्देश्यों को आगे बढ़ाया जा सके और लोगों पर नियंत्रण रखा जा सके। परन्तु यह धारणा उन ऐतिहासिक तथ्यों के विपरीत है जो हमें प्रारम्भिक मसीही लेखों के प्रसार के विषय में ज्ञात हैं। जब ये ग्रंथ पूरे रोमी साम्राज्य में फैलने लगे, तब प्रारम्भिक मसीहियों ने उन्हें इसलिए स्वीकार किया क्योंकि यह भली-भाँति जाना जाता था कि वे यीशु के मूल प्रत्यक्षदर्शियों, अर्थात् उनके प्रथम प्रेरितों, से प्राप्त हुए थे।

पहली शताब्दी में एक नई प्रकार की पांडुलिपि प्रचलन में आई, जिसे कोडेक्स कहा जाता था। धीरे-धीरे उसने स्क्रॉलों का स्थान लेना आरम्भ कर दिया। कोडेक्स सरकंडों से बने कागज़, अर्थात् पपीरस की चादरों को एक के ऊपर एक रखकर, मोड़कर और बाँधकर तैयार किए जाते थे। कलीसियाएँ इन आधुनिक पुस्तकों के पूर्वज माने जाने वाले इन कोडेक्सों का संग्रह अपने पुस्तकालयों में रखती थीं। वे अत्यन्त मूल्यवान माने जाते थे और बड़ी सावधानी से सुरक्षित रखे जाते थे। जब प्रारम्भिक विश्वासी अपने पुस्तकालयों के लिए इन ग्रंथों का संग्रह करते थे, तब किसी भी ग्रंथ को स्वीकार करने का एक महत्वपूर्ण आधार यह होता था कि क्या उसका स्पष्ट संबंध किसी प्रेरित प्रत्यक्षदर्शी से स्थापित किया जा सकता है या नहीं। किसी व्यक्ति या सभा ने इन ग्रंथों का मनमाने ढंग से चयन नहीं किया। बल्कि, उन्हें इसलिए स्वीकार किया गया क्योंकि वे अधिकारपूर्ण थे या उनका सीधा संबंध किसी मूल प्रेरित से सिद्ध किया जा सकता था। यही ग्रंथ आगे चलकर उस संग्रह का भाग बने जिसे आज हम नया नियम कहते हैं।

हमें इस प्रक्रिया की जानकारी प्रारम्भिक कलीसिया के अगुवों, जिन्हें कलीसिया के पिताओं के नाम से जाना जाता है, के लेखों से प्राप्त होती है। ये वे लोग थे जिन्होंने प्रारम्भिक कलीसिया में नेतृत्व किया और जिनमें से कुछ ने स्वयं मूल प्रेरितों से शिक्षा प्राप्त की थी।

उदाहरण के लिए, यीशु के चेले यूहन्ना ने इग्नैतियुस (35–117 ईस्वी) और पॉलीकार्प (69–155 ईस्वी) को शिक्षा दी। बाद में ये दोनों वर्तमान तुर्की के महत्वपूर्ण नगरों में बिशप बने। इसके पश्चात पॉलीकार्प ने इरिनियुस नामक एक भावी अगुवे को शिक्षा दी, जो आगे चलकर वर्तमान फ्रांस के ल्यों नगर का बिशप बना (130–200 ईस्वी)।

इग्नातियुस, पॉलीकार्प और इरिनियुस कलीसिया के पिताओं में गिने जाते हैं। उन्होंने और उनके समान अन्य अगुवों ने प्रारम्भिक कलीसिया, उसकी शिक्षाओं, उसकी रीति-नीतियों और उसके सिद्धान्तों के विषय में व्यापक रूप से लिखा। इन प्राचीन और प्रभावशाली मसीही अगुवों की उपलब्ध सभी रचनाएँ आज भी सुरक्षित हैं और उनका अंग्रेज़ी सहित अनेक भाषाओं में अनुवाद किया जा चुका है। उनके लेख हमें नए नियम के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं, जिसमें यह भी सम्मिलित है कि कौन-से ग्रंथ प्रारम्भ से ही सम्पूर्ण कलीसिया द्वारा अधिकारपूर्ण माने जाते थे। यह सब उन कलीसियाई सभाओं के आयोजित होने से बहुत पहले की बात है, जिनका उल्लेख अक्सर इस विषय में किया जाता है।

क्या नए नियम के मूल शब्दों में परिवर्तन कर दिया गया है?

अब आइए कुछ क्षण उन नए नियम की प्रतियों के विषय में विचार करें जो आज हमारे पास उपलब्ध हैं। क्या हम इस बात पर भरोसा कर सकते हैं कि हमारे पास वही शब्द हैं जिन्हें प्रत्यक्षदर्शियों ने मूल रूप से लिखा था? आज पुराने नियम या नए नियम की कोई भी मूल हस्तलिखित पांडुलिपि अस्तित्व में नहीं है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, क्योंकि प्राचीन काल की किसी भी अन्य पुस्तक की मूल पांडुलिपियाँ भी आज उपलब्ध नहीं हैं। उस समय पुस्तकें पपीरस और चर्मपत्र जैसी ऐसी सामग्री पर लिखी जाती थीं जो समय के साथ नष्ट हो जाती थीं। इसलिए आज हमारे पास मूल पांडुलिपियाँ नहीं, बल्कि उनकी प्रतिलिपियाँ हैं। अतः वास्तविक प्रश्न यह है कि, “ये प्रतिलिपियाँ कितनी विश्वसनीय हैं?”

आज हमारे पास नए नियम की संपूर्ण अथवा आंशिक सामग्री वाली 24,000 से अधिक हस्तलिखित पांडुलिपियाँ उपलब्ध हैं। इन प्रतियों की आपस में तुलना करके यह जाँचा जा सकता है कि क्या वे एक ही बात कहती हैं और उनमें कितनी समानता है। प्राचीन संसार का कोई भी अन्य ग्रंथ इतनी बड़ी संख्या में उपलब्ध पांडुलिपियों के मामले में नए नियम के निकट भी नहीं पहुँचता। इसके बाद जिस ग्रंथ का स्थान आता है, वह होमर द्वारा लिखित इलियड है, जिसकी केवल 643 हस्तलिखित प्रतियाँ आज तक सुरक्षित बची हैं।

केवल पांडुलिपियों की संख्या ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि यह भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि उपलब्ध प्रतियाँ मूल लेखन के समय से कितनी निकट की हैं। प्रतिलिपि जितनी अधिक मूल लेखन के समय के निकट होगी, उसमें परिवर्तन होने की संभावना उतनी ही कम होगी। इस दृष्टि से भी बाइबल अन्य सभी प्राचीन ग्रंथों से श्रेष्ठ सिद्ध होती है। होमर की इलियड लगभग 900 ईसा पूर्व लिखी गई थी, जबकि उसकी सबसे प्राचीन उपलब्ध प्रतियाँ लगभग 400 ईसा पूर्व की हैं। अर्थात् मूल लेखन और उपलब्ध प्रतियों के बीच लगभग 500 वर्षों का अंतर है। इसके विपरीत, नया नियम लगभग 40 ईस्वी से 100 ईस्वी के बीच लिखा

गया, और उसकी सबसे प्राचीन उपलब्ध प्रतियाँ लगभग 125 ईस्वी की हैं। अर्थात् मूल लेखन और उपलब्ध प्रतियों के बीच केवल लगभग 25 वर्षों का अंतर है।

आज हमारे पास उपलब्ध नए नियम का पाठ विलियम शेक्सपीयर के 37 नाटकों की अपेक्षा कहीं अधिक सुरक्षित अवस्था में है, जबकि वे सत्रहवीं शताब्दी में लिखे गए थे। शेक्सपीयर के प्रत्येक नाटक में ऐसे स्थान हैं जहाँ मूल पाठ का कुछ भाग लुप्त हो चुका है। इसलिए विद्वानों को उन रिक्त स्थानों को भरने के लिए अनुमान का सहारा लेना पड़ता है, क्योंकि किसी को यह निश्चित रूप से ज्ञात नहीं कि मूल पाठ में क्या लिखा था। परन्तु नए नियम के साथ ऐसी स्थिति नहीं है। उसमें किसी भी भाग के लुप्त होने का कोई प्रमाण नहीं मिलता। उपलब्ध पांडुलिपियों की विशाल संख्या स्वयं इस तथ्य की पुष्टि करती है। इसके अतिरिक्त, प्रारम्भिक कलीसिया के पिताओं ने अपने लेखों में नए नियम का इतनी बार उद्धरण दिया है कि उनके लेखों में नए नियम की लगभग प्रत्येक आयत उद्धृत मिल जाती है। इसलिए हम पूरे विश्वास के साथ कह सकते हैं कि आज हमारे पास जो नया नियम है, उसमें वही शब्द सुरक्षित हैं जिन्हें उसके मूल लेखकों ने लिखा था।

क्या बाइबल गलतियों और विरोधाभासों से भरी हुई है?

नए नियम की विश्वसनीयता के विरुद्ध सबसे अधिक लगाया जाने वाला आरोप यह है कि वह अनेक गलतियों और विरोधाभासों से भरा हुआ है। इस विषय पर पूरी चर्चा करने के लिए इस छोटी-सी पुस्तक से कहीं अधिक स्थान की आवश्यकता होगी। फिर भी, आइए तथाकथित त्रुटियों और विरोधाभासों के संबंध में कुछ महत्वपूर्ण बातों पर विचार करें।

जैसा कि मैंने पहले बताया है, आज उपलब्ध बाइबल की सभी पांडुलिपियाँ मूल प्रतियाँ नहीं, बल्कि उनकी हस्तलिखित प्रतिलिपियाँ हैं। मुद्रण यंत्र का आविष्कार 1453 ईस्वी तक नहीं हुआ था, इसलिए उस समय प्रत्येक प्रति हाथ से लिखी जाती थी। स्वाभाविक रूप से, प्रतिलिपि तैयार करने वाले लेखक कभी-कभी लिखते समय छोटी-छोटी भूलें कर देते थे। इसी कारण विभिन्न प्रतियों में कुछ पाठांतर, अर्थात् छोटे-छोटे अंतर, पाए जाते हैं। नए नियम की पांडुलिपियों में ऐसे पाठांतर लगभग 8 प्रतिशत हैं। इनमें से अधिकांश केवल वर्तनी या व्याकरण संबंधी त्रुटियाँ हैं, या फिर ऐसे स्थान हैं जहाँ किसी शब्द का क्रम बदल गया, कोई शब्द छूट गया, अथवा किसी शब्द को गलती से दो बार लिख दिया गया। ऐसी त्रुटियों को पहचानना सरल है और वे मूल अर्थ को किसी प्रकार प्रभावित नहीं करतीं।

कभी-कभी किसी प्रतिलिपिकार ने विभिन्न सुसमाचारों के दो विवरणों में सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया, या फिर ऐसी कोई जानकारी जोड़ दी जो उसे ज्ञात थी, परन्तु मूल पाठ में नहीं थी। उदाहरण के लिए, यूहन्ना अध्याय 7 आयत 53 से अध्याय 8 आयत 11 तक

उस स्त्री का वर्णन मिलता है जो व्यभिचार करते हुए पकड़ी गई थी। परन्तु यह घटना पाँचवीं शताब्दी से पहले की उपलब्ध पांडुलिपियों में नहीं पाई जाती। फिर भी आज अनेक आधुनिक अनुवाद इस विवरण को सम्मिलित करते हैं, क्योंकि यह उन बातों के अनुरूप है जो प्रारम्भिक पांडुलिपियों के अनुसार यीशु ने सिखाई और कीं। ऐसे अनुवाद सामान्यतः हाशिये में यह टिप्पणी भी देते हैं कि यह विवरण सम्भवतः बाद में जोड़ा गया है। कभी-कभी प्रतिलिपिकार किसी पद का अर्थ अधिक स्पष्ट करने के उद्देश्य से अपनी समझ के अनुसार कुछ स्पष्टीकरण जोड़ देते थे, परन्तु उनकी व्याख्या हमेशा सही नहीं होती थी। फिर भी, इन परिवर्तनों का महत्व बहुत कम है, क्योंकि वे न तो घटनाओं के क्रम को बदलते हैं और न ही मसीही विश्वास की किसी प्रमुख शिक्षा को प्रभावित करते हैं। इसके अतिरिक्त, हमारे पास इतनी अधिक प्राचीन पांडुलिपियाँ उपलब्ध हैं कि हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि बाद में जोड़े गए अंशों से पहले मूल पाठ कैसा था।

अब उस आरोप पर विचार कीजिए कि बाइबल विरोधाभासों से भरी हुई है। जब हम ध्यानपूर्वक उन बातों की जाँच करते हैं जिन्हें लोग विरोधाभास कहते हैं, तो हम पाते हैं कि वे वास्तव में विरोधाभास नहीं हैं। अधिकांश उदाहरण सुसमाचारों से लिए जाते हैं, जिन्हें चार अलग-अलग लेखकों ने अलग-अलग उद्देश्यों को ध्यान में रखकर लिखा था। इसलिए किसी लेखक ने किसी घटना का अधिक विवरण दिया, तो किसी ने कम; किसी ने एक विशेष पक्ष पर बल दिया, तो किसी ने दूसरे पक्ष पर। इस कारण उनके विवरणों में अंतर दिखाई देता है, परन्तु यह अंतर विरोधाभास नहीं है। और एक बार फिर, इन भिन्नताओं में से कोई भी न तो घटनाओं के मूल वर्णन को बदलता है और न ही मसीही विश्वास की किसी मूलभूत शिक्षा को प्रभावित करता है।

उदाहरण के लिए, मती अध्याय 8 आयत 28 से 34 में लिखा है कि यीशु ने गरगेसियों के प्रदेश में दो दुष्टात्मा-ग्रस्त व्यक्तियों को स्वतंत्र किया, जबकि मरकुस अध्याय 5 आयत 1 से 20 और लूका अध्याय 8 आयत 26 से 40 में केवल एक दुष्टात्मा-ग्रस्त व्यक्ति का उल्लेख मिलता है, और वहाँ स्थान का नाम गदरिनियों का प्रदेश बताया गया है। इन तथाकथित विरोधाभासों का उत्तर क्या है?

जब हम भूगोल से संबंधित कुछ तथ्यों को जानते हैं और इन विवरणों पर थोड़ा ध्यानपूर्वक विचार करते हैं, तब इसका उत्तर अत्यन्त सरल हो जाता है। यह घटना वास्तव में गदरा नगर के क्षेत्र में घटी थी। गरगेसा उसी क्षेत्र का एक अन्य नगर था। इसलिए गरगेसियों का प्रदेश और गदरिनियों का प्रदेश दोनों ही उस भौगोलिक क्षेत्र के सामान्य नाम थे जहाँ ये दोनों नगर स्थित थे।

इसके अतिरिक्त, मरकुस और लूका यीशु के मूल बारह प्रेरितों में से नहीं थे और वे उस समय स्वयं उपस्थित नहीं थे जब यीशु ने उन दुष्टात्माओं को निकाला था। परन्तु मत्ती वहाँ उपस्थित थे (मत्ती अध्याय 8 आयत 23)। इसलिए मरकुस और लूका के विवरण अपेक्षाकृत संक्षिप्त हैं, परन्तु वे मत्ती के विवरण का विरोध नहीं करते।

यदि वहाँ दो दुष्टात्मा-ग्रस्त व्यक्ति थे, तो यह तो निश्चित ही है कि वहाँ एक व्यक्ति भी था। इसलिए मरकुस और लूका द्वारा केवल एक व्यक्ति का उल्लेख करना किसी प्रकार का विरोधाभास नहीं है। सम्भव है कि उन्होंने उन दोनों में से उसी व्यक्ति पर विशेष ध्यान दिया हो जो अधिक प्रसिद्ध था, या जो दोनों में अधिक उग्र और हिंसक था। इसलिए इन विवरणों में अंतर तो है, परन्तु विरोधाभास नहीं।



हम नए नियम पर भरोसा कर सकते हैं। न केवल हमारे पास इतनी अधिक हस्तलिखित पांडुलिपियों के रूप में प्रबल प्रमाण उपलब्ध हैं कि यह विश्वासपूर्वक कहा जा सके कि उसके मूल शब्द सुरक्षित रूप से हमारे पास पहुँचे हैं, बल्कि हम सर्वशक्तिमान परमेश्वर की सर्वोच्च प्रभुता पर भी भरोसा कर सकते हैं। वही परमेश्वर हैं जिन्होंने आकाश में तारों और ग्रहों को इतनी अद्भुत व्यवस्था और सटीकता के साथ स्थापित किया कि आज हम उनके गतिचक्र की गणना करके यह बता सकते हैं कि वे किस दिन और किस समय पुनः दिखाई देंगे। निश्चय ही, वही परमेश्वर इस बात को भी सुनिश्चित करने में समर्थ थे कि इस समस्त सृष्टि की सबसे महत्वपूर्ण पुस्तक बिना विकृत हुए हमारे पास सुरक्षित पहुँच जाए।

यदि आप बाइबल की विश्वसनीयता के विषय में और अधिक जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं, तो निम्नलिखित पुस्तकें इस विषय पर अत्यन्त उपयोगी साधन हैं।

- गॉड ब्रीदु: द अनडिनाएबल पावर एंड रिलायबिलिटी ऑफ स्क्रिपचर, लेखक—जोश मैकडॉवेल; बार्बर पब्लिशिंग, इंक., 2015।
- एविडेन्स दैट डिमांड्स अ वर्डिक्ट: लाइफ-चेंजिंग ट्रुथ फॉर अ स्केप्टिकल वर्ल्ड, लेखक—जोश मैकडॉवेल और डॉ. शॉन मैकडॉवेल; थॉमस नेल्सन, 2017।
- व्हेन क्रिटिक्स आस्क: अ पॉप्युलर हैंडबुक ऑन बाइबल डिफिकल्टीज़, लेखक—नॉर्मन गीसलर और थॉमस होवे; विक्टर बुक्स, 1992।

- हाउ वी गॉट द बाइबल, लेखक—डॉ. टिमोथी पॉल जोन्स; रोज़ पब्लिशिंग, 2015।
- द केस फॉर क्राइस्ट: अ जर्नलिस्ट्स पर्सनल इन्वेस्टिगेशन ऑफ द एविडेन्स फॉर जीसस, लेखक—ली स्ट्रोबल; जॉर्डरवन, 2016।
- कोल्ड-केस क्रिश्चियनिटी: अ होमिसाइड डिटेक्टिव इन्वेस्टिगेट्स द क्लेम्स ऑफ द गॉस्पेल्स, लेखक—जे. वॉर्नर वालेस; डेविड सी. कुक, 2013।

कुछ अंतिम विचार

पिछले कई वर्षों में मैंने बहुत-से लोगों को नियमित और क्रमबद्ध रूप से बाइबल पढ़ने की चुनौती दी है। मेरी जानकारी में जितने लोगों ने इस चुनौती को स्वीकार किया, वे सभी यह गवाही देंगे कि इस अभ्यास ने उनके जीवन को बेहतर के लिए बदल दिया। यदि आप नियमित और क्रमबद्ध रूप से बाइबल पढ़ने वाले बन जाते हैं, विशेषकर नए नियम के, तो एक वर्ष बाद आप स्वयं को एक बदला हुआ व्यक्ति पाएँगे। आपके भीतर जीवन की परिस्थितियों का सामना करने के लिए पहले से अधिक शान्ति, आनन्द, आत्मविश्वास और आशा होगी।

यद्यपि नियमित रूप से बाइबल पढ़ने की आदत विकसित करने और उसे बनाए रखने में कुछ प्रयास अवश्य लगता है, फिर भी इसका प्रतिफल अत्यन्त मूल्यवान है। जब यह आपकी आदत बन जाए, तब आप अपनी पढ़ने की विधि में परिवर्तन भी कर सकते हैं। यह बात सदैव स्मरण रखें कि उद्देश्य यह है कि नए नियम की प्रत्येक पुस्तक को आरम्भ से अंत तक यथासंभव कम समय में पूरा पढ़ा जाए।

बहुत वर्ष पहले, जब मैं नियमित रूप से बाइबल पढ़ने लगी, तब मैंने अपने लिए एक विशेष क्रम निर्धारित किया। मैं पहले किसी एक सुसमाचार को आरम्भ से अंत तक पढ़ती थी, और उसके बाद प्रत्येक पत्री को भी आरम्भ से अंत तक पढ़ती थी। फिर मैं अगले सुसमाचार पर जाती और उसके बाद पुनः सभी पत्रियों को पढ़ती। जब चारों सुसमाचार पूरे हो गए, तब मैंने प्रेरितों के काम और उसके बाद फिर सभी पत्रियों को पढ़ा। एक ऐसे सेवक, जिनका मैं बहुत सम्मान करती थी, उन्होंने मुझसे कहा था कि पत्रियाँ विशेष रूप से मसीहियों को यह सिखाने के लिए लिखी गई हैं कि उन्हें क्या विश्वास करना चाहिए और किस प्रकार का जीवन जीना चाहिए। इसी कारण मैंने पत्रियों को बार-बार पढ़ने का निर्णय लिया।

कई वर्षों तक मैंने प्रकाशितवाक्य की पुस्तक को नहीं पढ़ा, क्योंकि उसकी बातें मेरी समझ में नहीं आती थीं। बाद में, जब मसीही विश्वास की मूल शिक्षाओं और यीशु के दूसरे आगमन के विषय में मेरी समझ बढ़ गई, तब मैं उस पुस्तक पर फिर वापिस आ गई।

यदि किसी समय आपकी नियमित पढ़ने की आदत टूट जाए और आप कुछ समय तक बाइबल न पढ़ पाएँ, तो निराश होकर हार मत मानिए। बस फिर से आरम्भ कर दीजिए। परमेश्वर आपसे क्रोधित नहीं हैं। आप बाइबल इसलिए नहीं पढ़ रहे कि परमेश्वर से कोई विशेष कृपा या पुरस्कार प्राप्त कर सकें। आप अपने प्रयासों के द्वारा उनका प्रेम या अनुग्रह अर्जित नहीं कर सकते। मसीह में विश्वास के द्वारा आप पहले ही उनके पुत्र या पुत्री बन चुके हैं, और उनका प्रेम तथा अनुग्रह आपको पहले से ही प्राप्त है। आप बाइबल इसलिए

पढ़ते हैं कि आप उन्हें और अधिक गहराई से जान सकें, और उनके वचन तथा उनके पवित्र आत्मा के द्वारा वे आपके जीवन में वह परिवर्तन उत्पन्न करें जो वे चाहते हैं।

नियमित रूप से बाइबल पढ़ना न केवल प्रभु के साथ आपके संबंध को और अधिक गहरा करेगा तथा आपको मसीह के स्वरूप के समान बनने में सहायता देगा, बल्कि आप निम्नलिखित परिणामों की भी अपेक्षा कर सकते हैं।

- नियमित अध्ययन आपको इस जीवन को सही दृष्टिकोण से देखने में सहायता करेगा। हम इस संसार में केवल कुछ समय के लिए यात्री हैं, और हमारा महान तथा उत्तम भविष्य अभी हमारे सामने है। जब यह सत्य आपके जीवन का दृष्टिकोण बन जाएगा, तब भय आपके जीवन से दूर होने लगेगा, क्योंकि आप जानेंगे कि आपके आगे एक महिमामय और धन्य अंत आपकी प्रतीक्षा कर रहा है। तब जीवन की परिस्थितियाँ आपको पहले की तरह विचलित नहीं कर पाएँगी।

- नियमित अध्ययन आपके विचारों और भावनाओं को सही दिशा देगा। यह न केवल आपके व्यक्तिगत संघर्षों और कठिनाइयों का सामना करने में आपकी सहायता करेगा, बल्कि उस बढ़ती हुई अव्यवस्था और अशान्ति के बीच भी आपको स्थिर रखेगा जो प्रभु यीशु के पुनः आगमन के निकट आने के साथ संसार में बढ़ती जाएगी। इस समय जब धार्मिक धोखा निरन्तर बढ़ रहा है, परमेश्वर का वचन आपको झूठी शिक्षाओं को पहचानने की समझ प्रदान करेगा।

- नियमित अध्ययन आपको सही प्राथमिकताएँ निर्धारित करना सिखाएगा। अनन्त बातों का महत्व अस्थायी और नश्वर बातों से कहीं अधिक है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि लोग यीशु मसीह के द्वारा मिलने वाले उद्धार के ज्ञान तक पहुँचें। हमें संसार में जहाँ भी परमेश्वर ने हमें रखा है, वहाँ मसीह के प्रकाश को चमकाना है। और जब परमेश्वर का वचन आपके मन और हृदय पर राज्य करेगा, तब आप उसके प्रकाश को प्रकट किए बिना रह ही नहीं सकेंगे।

सबसे महान उपहार जो आप स्वयं को और उन लोगों को दे सकते हैं जिनके जीवन को आप प्रभावित करते हैं, वह यह है कि आप नए नियम के नियमित और क्रमबद्ध पाठक बन जाएँ। अब और समय व्यर्थ मत कीजिए। आज ही आरम्भ कीजिए।

नए नियम की पुस्तकों का संक्षिप्त सारांश।

नए नियम के ग्रंथ उस क्रम में व्यवस्थित नहीं हैं जिस क्रम में वे लिखे गए थे। हमें यह निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है कि उन्हें वर्तमान क्रम में किसने व्यवस्थित किया, परन्तु उनका यह क्रम एक स्पष्ट और तर्कसंगत व्यवस्था को प्रकट करता है। नए नियम का आरम्भ चार सुसमाचारों से होता है, उसके बाद प्रेरितों के काम की पुस्तक आती है, और फिर पत्रियाँ आती हैं। सुसमाचार यीशु के जीवन-वृत्तांत हैं, जिन्हें उन लोगों ने लिखा जो या तो स्वयं उन्हें भली-भाँति जानते थे, या जिन्होंने ऐसे लोगों से जानकारी प्राप्त की थी जिनका यीशु के साथ व्यक्तिगत संपर्क रहा था। प्रेरितों के काम की पुस्तक यीशु के प्रथम अनुयायियों के कार्यों का ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत करती है, जब वे उनके पुनरुत्थान का संदेश सुनाने के लिए विभिन्न स्थानों पर गए। पत्रियाँ उन कलीसियाओं के लिए लिखी गई थीं जो प्रेरितों के काम में वर्णित समय के दौरान स्थापित हुई थीं। नए नियम का समापन प्रकाशितवाक्य की पुस्तक से होता है, जिसमें यीशु के दूसरे आगमन और परमेश्वर की अपने परिवार के लिए बनाई गई योजना की पूर्णता का वर्णन किया गया है।

सुसमाचार और प्रेरितों के काम।

चारों सुसमाचारों के नाम उनके लेखकों—मती, मरकुस, लूका और यूहन्ना—के नाम पर रखे गए हैं। सुसमाचार शब्द का अर्थ है “शुभ समाचार”। इन पुस्तकों के लेखकों ने स्वयं अपनी रचनाओं को सुसमाचार नहीं कहा था। इन पुस्तकों के लिए “सुसमाचार” शब्द का प्रयोग दूसरी शताब्दी के उत्तरार्ध में आरम्भ हुआ।

ये ग्रंथ यीशु के जन्म से लेकर उनके स्वर्गारोहण तक के जीवन का ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत करते हैं। चारों सुसमाचार मूल रूप से एक ही घटनाक्रम का वर्णन करते हैं। उनमें बताया गया है कि यीशु ने अपने आपको यहूदी लोगों के सामने पुराने नियम की उन भविष्यवाणियों की पूर्ति के रूप में प्रस्तुत किया जिनमें आने वाले उद्धारकर्ता का वचन दिया गया था। उन्होंने परमेश्वर के राज्य के निकट होने का प्रचार करते हुए अनेक आश्चर्यकर्म और चंगाइयाँ कीं। आरम्भ में बहुत-से लोगों ने उन्हें स्वीकार किया, परन्तु बाद में अधिकांश लोगों ने उन्हें अस्वीकार कर दिया। अंततः यीशु को रोमी शासन के अधिकारियों के हाथों सौंप दिया गया, उन्हें क्रूस पर चढ़ाया गया और दफनाया गया। परन्तु तीन दिन बाद वे मरे हुएों में से जी उठे।

चारों सुसमाचारों में यीशु के प्रारम्भिक जीवन के विषय में बहुत कम विवरण दिया गया है, परन्तु प्रत्येक सुसमाचार उनके क्रूस पर चढ़ाए जाने से पहले के अंतिम सप्ताह पर विशेष बल देता है। प्राचीन समय में जीवन-वृत्तांत लिखने की शैली आज की जीवनी लेखन शैली से

भिन्न थी। उस समय के लेखक किसी व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक काल को समान महत्व नहीं देते थे। बचपन और प्रारम्भिक विकास के वर्षों को विशेष महत्व नहीं दिया जाता था। इसलिए उनका अधिकांश लेखन उस व्यक्ति के वयस्क जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं पर केन्द्रित होता था। यही कारण है कि सुसमाचारों में यीशु की लगभग तीन वर्षों की सेवकाई, उनकी मृत्यु और उनके पुनरुत्थान पर विशेष बल दिया गया है।

यद्यपि चारों सुसमाचार मूल रूप से एक ही घटनाक्रम का वर्णन करते हैं, इसलिए उनमें कुछ सामग्री एक-दूसरे से मिलती-जुलती है, फिर भी प्रत्येक सुसमाचार एक अलग प्रकार के पाठकों को ध्यान में रखकर और एक विशेष उद्देश्य से लिखा गया है। जब चारों सुसमाचारों को एक साथ मिलाकर इस प्रकार व्यवस्थित किया जाता है कि सभी घटनाएँ क्रम से आ जाएँ और कोई भी बात दोहराई या छोड़ी न जाए, तब भी उनमें यीशु की सेवकाई के केवल लगभग पचास दिनों का ही विस्तृत विवरण मिलता है। यद्यपि इन लेखकों के पास लिखने के लिए बहुत अधिक सामग्री उपलब्ध थी, फिर भी उन्होंने पवित्र आत्मा की प्रेरणा से केवल वही बातें लिखीं जो लोगों को यह विश्वास दिलाने के लिए आवश्यक थीं कि यीशु ही परमेश्वर, हमारे प्रभु और उद्धारकर्ता हैं।

“यही वह चेला है जिसने इन बातों की गवाही दी और इन्हें लिख भी दिया है। और हम जानते हैं कि उसकी गवाही सत्य है। यीशु ने और भी बहुत-से कार्य किए। यदि उनमें से प्रत्येक को विस्तार से लिखा जाता, तो मेरा विचार है कि जो पुस्तकें लिखी जातीं, उनके लिए समस्त संसार में भी स्थान पर्याप्त न होता” (यूहन्ना अध्याय 21 आयत 24 और 25)।

“परन्तु ये बातें इसलिए लिखी गई हैं कि तुम विश्वास करो कि यीशु ही मसीह, परमेश्वर के पुत्र हैं, और विश्वास करके उनके नाम से जीवन पाओ” (यूहन्ना अध्याय 20 आयत 31)।

मत्ती का सुसमाचार (58-68 ईस्वी)।

मत्ती ने अपना सुसमाचार मुख्य रूप से यहूदी पाठकों के लिए लिखा, ताकि उन्हें यह विश्वास दिला सके कि यीशु वही मसीह हैं जिनकी प्रतिज्ञा पुराने नियम के भविष्यद्वक्ताओं ने की थी। उनका सुसमाचार नए नियम के आरम्भ में इसलिए रखा गया है कि वह सबसे पहले लिखा गया था, ऐसा नहीं है; बल्कि इसलिए कि वह स्पष्ट रूप से दिखाता है कि यीशु का पुराने नियम के साथ कितना गहरा संबंध है। मत्ती अन्य सुसमाचार लेखकों की अपेक्षा पुराने नियम का अधिक उद्धरण देते हैं और उसकी भविष्यवाणियों की ओर अधिक संकेत करते हैं। वे मसीह को इस्राएल के उद्धारकर्ता और राजा के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जो भविष्यवाणियों की पूर्णता हैं। भविष्यद्वक्ताओं के लेखों के आधार पर पहली शताब्दी के

यहूदी इस बात की प्रतीक्षा कर रहे थे कि मसीह आकर पृथ्वी पर अपना राज्य स्थापित करेंगे। इसलिए परमेश्वर का आने वाला राज्य मती के सुसमाचार का एक प्रमुख विषय है।

मरकुस का सुसमाचार (55-65 ईस्वी)।

संभवतः मरकुस का सुसमाचार सबसे पहले लिखा गया था। यह चारों सुसमाचारों में सबसे छोटा और सबसे सरल है तथा इसमें शिक्षाओं की अपेक्षा कार्यों पर अधिक बल दिया गया है। मरकुस ने अपना सुसमाचार अन्यजाति, अर्थात् गैर-यहूदी रोमी पाठकों के लिए लिखा, ताकि उन्हें यह विश्वास दिलाया जा सके कि यीशु वास्तव में परमेश्वर हैं। रोमी लोग प्रभावशाली कार्यों से प्रभावित होते थे, इसलिए मरकुस ने यीशु को सामर्थी कर्मों वाले ऐसे पुरुष के रूप में प्रस्तुत किया, जिन्होंने अनेक आश्चर्यकर्म किए और अपने पुनरुत्थान के द्वारा मृत्यु पर विजय प्राप्त की। उन्होंने यीशु के बचपन के विषय में कोई विवरण नहीं दिया, क्योंकि ऐसी जानकारी उनके रोमी पाठकों के लिए विशेष महत्व नहीं रखती थी। इसी प्रकार उन्होंने पुराने नियम से बहुत कम उद्धरण दिए, कोई वंशावली प्रस्तुत नहीं की, और न ही यहूदियों की व्यवस्था या रीति-रिवाजों का विशेष उल्लेख किया, क्योंकि ऐसी बातें गैर-यहूदी रोमी पाठकों के लिए अधिक अर्थपूर्ण नहीं होतीं।

लूका का सुसमाचार (60-68 ईस्वी)।

लूका का सुसमाचार दो भागों में लिखे गए एक विस्तृत ग्रंथ का पहला भाग है, जिसे उन्होंने थियोफिलुस नामक एक व्यक्ति के लिए लिखा। इसका उद्देश्य उसे यह विश्वास दिलाना था कि यीशु के जीवन, उनकी मृत्यु और उनके पुनरुत्थान से संबंधित घटनाएँ ऐतिहासिक रूप से सत्य और विश्वसनीय हैं। सम्भवतः थियोफिलुस एक अन्यजाति का नया विश्वासी था, और लूका, जो स्वयं भी सम्भवतः अन्यजाति का था, इस बात पर विशेष बल देते हैं कि यीशु केवल यहूदियों के ही नहीं, बल्कि यहूदियों और अन्यजातियों दोनों के उद्धारकर्ता हैं।

लूका का सुसमाचार अन्य तीनों सुसमाचारों की तुलना में अधिक विस्तृत है, और इसमें आधे से भी अधिक सामग्री ऐसी है जो केवल इसी सुसमाचार में पाई जाती है। इसमें यीशु की वंशावली, उनके जन्म तथा उनके प्रारम्भिक जीवन के अनेक ऐसे विवरण दिए गए हैं जो अन्य सुसमाचारों में नहीं मिलते। इसके अतिरिक्त इसमें स्त्रियों, बच्चों तथा यहूदी समाज द्वारा तिरस्कृत लोगों के साथ प्रभु यीशु के व्यवहार और संबंधों का भी विशेष वर्णन मिलता है। अपने ग्रंथ में बड़ी संख्या में ऐतिहासिक रूप से सत्यापित किए जा सकने वाले विवरणों को सम्मिलित करने के कारण लूका ने एक विश्वसनीय इतिहासकार के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त की है, यहाँ तक कि उन विद्वानों के बीच भी जो यह विश्वास नहीं करते कि यीशु परमेश्वर हैं।

यूहन्ना का सुसमाचार (80-90 ईस्वी)।

यूहन्ना का सुसमाचार अन्य तीनों सुसमाचारों से स्पष्ट रूप से भिन्न है। मती, मरकुस और लूका लगभग एक ही समय में लिखे गए थे। उनमें बहुत-सी सामग्री समान है और वे यीशु के जीवन तथा सेवकाई का वर्णन लगभग एक ही दृष्टिकोण से करते हैं। परन्तु यूहन्ना ने अपना सुसमाचार लगभग बीस से तीस वर्ष बाद लिखा, ताकि पहले से लिखे गए सुसमाचारों की पूर्ति कर सकें। उनके सुसमाचार की लगभग बानवे प्रतिशत सामग्री केवल उसी में पाई जाती है।

जब यूहन्ना ने अपना सुसमाचार लिखा, उस समय कुछ झूठे शिक्षक यह सिखाने लगे थे कि मसीह न तो वास्तव में परमेश्वर हैं और न ही वे वास्तव में मनुष्य के रूप में देहधारी हुए। इन गलत शिक्षाओं का उत्तर देने के लिए यूहन्ना ने अपना सुसमाचार सभी लोगों के लिए लिखा। यद्यपि अन्य सुसमाचार लेखक भी यीशु को देहधारी परमेश्वर के रूप में प्रस्तुत करते हैं, फिर भी यूहन्ना ने विशेष रूप से उनके परमेश्वरत्व पर सबसे अधिक बल दिया है। उनका सुसमाचार ऐतिहासिक विवरण की अपेक्षा अधिक धर्मवैचारिक है और उसका मुख्य उद्देश्य परमेश्वर के स्वरूप तथा उनकी योजना को प्रकट करना है। प्रेरित यूहन्ना ने यीशु के जीवन की ऐसी घटनाओं का चयन किया जो विशेष रूप से यह सिद्ध करती हैं कि यीशु देहधारी परमेश्वर हैं—अर्थात् परमेश्वर जिन्होंने मनुष्य का रूप धारण किया, परन्तु ऐसा करते हुए भी परमेश्वर होना कभी नहीं छोड़ा।

प्रेरितों के काम की पुस्तक (60-68 ईस्वी)।

प्रेरितों के काम की पुस्तक थियोफिलुस के लिए लूका द्वारा लिखे गए दो-भागीय ग्रंथ का दूसरा भाग है। इसका उद्देश्य भी यही था कि थियोफिलुस को यह पूरा विश्वास हो जाए कि यीशु मसीह पर उसका विश्वास व्यर्थ नहीं है। लूका इस पुस्तक का आरम्भ यह बताते हुए करते हैं कि पुनर्जीवित प्रभु यीशु “चालीस दिनों तक समय-समय पर प्रेरितों को दिखाई देते रहे और अनेक प्रमाणों के द्वारा उन्हें यह विश्वास दिलाते रहे कि वे वास्तव में जीवित हैं” (प्रेरितों के काम अध्याय 1 आयत 3)।

इसके बाद लूका उसी स्थान से घटनाओं का वर्णन आगे बढ़ाते हैं जहाँ उनका सुसमाचार समाप्त हुआ था। वे बताते हैं कि किस प्रकार पवित्र आत्मा आया और उसने यीशु के प्रथम अनुयायियों को सामर्थ्य दी, ताकि वे आगे बढ़कर उनके विषय में गवाही दें। प्रेरितों के काम की पुस्तक इस बात का ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत करती है कि किस प्रकार यीशु के पुनरुत्थान का शुभ समाचार पूरे रोमी साम्राज्य में फैलता गया।

इस पुस्तक के पहले बारह अध्यायों में प्रेरितों की सेवकाई का वर्णन है। उन्होंने सबसे पहले यरूशलेम नगर में प्रचार किया, और फिर उनका कार्य यहूदिया तथा सामरिया तक फैल गया, जो यरूशलेम के पश्चिम और उत्तर-पश्चिम के क्षेत्र थे। यरूशलेम की कलीसिया में पतरस और याकूब प्रमुख अगुवे बन गए।

अध्याय 13 से लेकर पुस्तक के अंत तक मुख्य रूप से प्रेरित पौलुस की सेवकाई का वर्णन किया गया है। पौलुस, यीशु के पुनरुत्थान के कुछ वर्षों बाद मसीह पर विश्वास करने लगा, और प्रभु यीशु ने स्वयं उसे अन्यजातियों के पास भेजने के लिए नियुक्त किया। पौलुस ने उस समय के ज्ञात संसार के अनेक भागों की यात्रा की और मसीह पर विश्वास के द्वारा मिलने वाले उद्धार के संदेश को पूरे रोमी साम्राज्य में पहुँचाया। प्रेरितों के काम की पुस्तक का अंतिम भाग एशिया माइनर, अर्थात् वर्तमान तुर्की, और यूनान में पौलुस द्वारा की गई तीन अलग-अलग मिशनरी यात्राओं का विवरण प्रस्तुत करता है।

पत्रियाँ।

प्रेरितों के काम की पुस्तक में वर्णित समय के दौरान जब विभिन्न स्थानों पर विश्वासियों के समुदाय, अर्थात् कलीसियाएँ, स्थापित होने लगीं, तब प्रेरितों ने अनुभव किया कि इन कलीसियाओं के साथ निरंतर संपर्क बनाए रखना आवश्यक है। नए विश्वासियों को उस उद्धार के विषय में और अधिक शिक्षा की आवश्यकता थी जो यीशु ने अपनी मृत्यु और पुनरुत्थान के द्वारा प्रदान किया। साथ ही, उन्हें यह भी सीखना था कि प्रलोभनों और विभिन्न प्रकार के आकर्षणों से भरे इस संसार में परमेश्वर को प्रसन्न करने वाला जीवन किस प्रकार जिया जाए। इसके अतिरिक्त, विश्वास और आचरण से संबंधित अनेक प्रश्न भी उत्पन्न होने लगे, जिनका उत्तर देना आवश्यक था। इन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नए नियम की इक्कीस पत्रियाँ लिखी गईं।

पत्रियों को प्रायः पत्र कहा जाता है, परन्तु वे उस अर्थ में पत्र नहीं हैं जैसा हम आज सामान्यतः समझते हैं। वास्तव में ये लिखित उपदेश या शिक्षाप्रद प्रवचन हैं। जब कोई लेखक स्वयं उपस्थित होकर अपना संदेश नहीं दे सकता था, तब वह एक पत्री भेजता था। इन उपदेशों को इस उद्देश्य से लिखा गया था कि उन्हें लोगों के समूह के सामने ऊँचे स्वर में पढ़कर सुनाया जाए। लेखक यह अपेक्षा करता था कि उसका कोई सहकर्मी उस पत्री की विषयवस्तु को सभा के सामने पढ़े या सुनाए। ये ग्रंथ उन व्यक्तियों और विश्वासियों के समूहों के लिए भेजे गए थे, जिन्हें पहले ही, प्रायः उसी लेखक के द्वारा, कुछ शिक्षा दी जा चुकी थी। इसलिए उनमें लिखी गई बातें उनके लिए पूरी तरह नई नहीं थीं। वे पहले से ही उनकी पृष्ठभूमि और संदर्भ को समझते थे।

पत्रियों में जिन विषयों पर चर्चा की गई है, उनमें से कुछ आज हमें अपरिचित या असामान्य प्रतीत हो सकते हैं। परन्तु हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि इन लेखकों ने वास्तविक लोगों को उनके वास्तविक जीवन की परिस्थितियों के विषय में लिखा था। वे परिस्थितियाँ उस संस्कृति के कारण उत्पन्न हुई थीं जिसमें वे नए विश्वासी रहते थे। उदाहरण के लिए, पूरे रोमी साम्राज्य में ऐसे बाज़ार थे जहाँ वह मांस बेचा जाता था जिसे विभिन्न देवताओं के लिए बलि चढ़ाने के बाद बाज़ार में लाया जाता था। इसलिए यह प्रश्न उठा कि क्या किसी मसीही के लिए मूर्तियों को चढ़ाए गए मांस को खाना उचित है या नहीं। एक और महत्वपूर्ण प्रश्न तब उत्पन्न हुआ जब सुसमाचार का प्रचार यहूदियों से आगे बढ़कर अन्यजातियों तक पहुँचा। तब यह विवाद सामने आया कि क्या अन्यजाति के विश्वासियों को भी मूसा की व्यवस्था का पालन करना आवश्यक है, जो यहूदियों के जीवन का आधार थी। आज ये दोनों विषय हमें बहुत महत्वपूर्ण नहीं लगते, परन्तु उस समय और उस संस्कृति में ये अत्यन्त गंभीर और महत्वपूर्ण प्रश्न थे।

पत्रियों में उन झूठी शिक्षाओं और विधर्मों का भी उत्तर दिया गया है जो कलीसिया की स्थापना के तुरंत बाद ही फैलने लगे थे। कुछ लोग, जिन्हें यहूदीवादी कहा जाता था, यह शिक्षा देते थे कि अन्यजातियों को उद्धार पाने के लिए मूसा की व्यवस्था का पालन करना अनिवार्य है। वे अन्यजाति के विश्वासियों को दूसरे दर्जे का मसीही मानते थे, जिसके कारण यहूदी और अन्यजाति के विश्वासियों के बीच तनाव और मतभेद उत्पन्न हो गए।

इसी समय एक और झूठी शिक्षा विकसित होने लगी, जिसे आगे चलकर ज्ञानवाद कहा गया। ज्ञानवादी शिक्षक यह दावा करते थे कि उद्धार केवल कुछ चुनिंदा लोगों को किसी गुप्त ज्ञान के द्वारा प्राप्त होता है। वे पाप, दोष या विश्वास के विषय में कुछ नहीं सिखाते थे। वे मानसिक ज्ञान और बौद्धिक विकास पर अत्यधिक बल देते थे तथा यह घोषणा करते थे कि भौतिक संसार और पदार्थ स्वभावतः बुरे हैं। ऐसी मान्यताओं के कारण उन्होंने यह अस्वीकार कर दिया कि यीशु वास्तव में मनुष्य के रूप में देहधारी हुए थे, और उन्होंने उनके शारीरिक पुनरुत्थान का भी इन्कार किया।

पौलुस की पत्रियाँ।

यीशु के स्वर्ग पर आरोहित होने के बाद सुसमाचार के प्रचार-प्रसार में प्रेरित पौलुस सबसे प्रमुख सेवकों में से एक थे। इसी कारण नए नियम में उनकी तरह पत्रियाँ सबसे पहले रखी गई हैं। उनकी पत्रियों के नाम उन कलीसियाओं या व्यक्तियों के नाम पर रखे गए हैं जिनके लिए वे लिखी गई थीं, और उनका क्रम सामान्यतः उस स्थान या व्यक्ति के महत्व के अनुसार रखा गया है। इब्रानियों की पत्री पौलुस की अन्य पत्रियों के अंत में रखी गई है,

क्योंकि यद्यपि इस पत्री में लेखक ने अपना नाम नहीं लिखा है, फिर भी अधिकांश विद्वानों का मत है कि इसका लेखक पौलुस ही था।

जब पौलुस के परिवर्तन के समय प्रभु यीशु उस पर प्रकट हुए, तब उन्होंने उससे कहा कि वे आगे भी उस पर प्रकट होंगे और उसे और भी बातें बताएँगे (प्रेरितों के काम अध्याय 26 आयत 18; गलतियों अध्याय 1 आयत 11 और 12)। बाद के अवसरों पर प्रभु यीशु ने पौलुस पर फिर प्रकट होकर उसे परमेश्वर की योजना से संबंधित अनेक ऐसे रहस्य प्रकट किए जिन्हें उसने आगे चलकर अपने प्रचार और अपनी पत्रियों में लिखा। यहाँ रहस्य शब्द का अर्थ ऐसी बात से है जो पहले परमेश्वर की योजना और उद्देश्य में प्रकट नहीं की गई थी।

इन रहस्यों में मसीह के साथ विश्वासी की एकता, मसीह की देह के रूप में कलीसिया, यीशु के दूसरे आगमन से पहले विश्वासियों का उठा लिया जाना, जिसे सामान्यतः हरण कहा जाता है, तथा पुनरुत्थान के बाद मिलने वाले महिमामय शरीर का स्वरूप सम्मिलित है (कुलुस्सियों अध्याय 1 आयत 26 और 27; इफिसियों अध्याय 5 आयत 30 से 32; 1 कुरिन्थियों अध्याय 15 आयत 51 और 52)। इन विशेष प्रकाशनों को कभी-कभी पौलुस को दिया गया प्रकाशन भी कहा जाता है।

रोमियों की पत्री (57 ईस्वी)।

रोम रोमी साम्राज्य की राजधानी तथा उसका सबसे बड़ा और सबसे महत्वपूर्ण नगर था। प्रेरितों के काम की पुस्तक यह नहीं बताती कि रोम की कलीसिया की स्थापना कैसे हुई। सबसे अधिक स्वीकार किया जाने वाला मत यह है कि एशिया माइनर और यूनान में पौलुस की सेवकाई के द्वारा जो लोग विश्वासी बने थे, उनमें से कुछ रोम जाकर बस गए और वहाँ एक कलीसिया की स्थापना की। पौलुस स्वयं अभी तक रोम नहीं गया था, परन्तु उसकी तीव्र इच्छा थी कि वह वहाँ के विश्वासियों से मिले। इसलिए उसने इस यात्रा की तैयारी के रूप में यह पत्री लिखी।

रोमियों की पत्री पौलुस की सबसे लंबी और सबसे व्यवस्थित पत्री है, जिसमें उसने उस संदेश को विस्तार से प्रस्तुत किया है जिसका वह प्रत्येक स्थान पर प्रचार करता था। उसने बड़ी सावधानी से समझाया कि प्रत्येक मनुष्य, चाहे वह यहूदी हो या अन्यजाति, पवित्र परमेश्वर के सामने पापी और दोषी है। इसके बाद उसने यह बताया कि प्रत्येक व्यक्ति मसीह पर विश्वास के द्वारा परमेश्वर की धार्मिकता को प्राप्त कर सकता है। पौलुस ने यह भी विस्तार से समझाया कि जो व्यक्ति मसीह पर विश्वास करने के द्वारा धर्मी ठहराया गया है, वह अपने भीतर वास करने वाले पवित्र आत्मा की सामर्थ से पवित्रीकरण की प्रक्रिया में आगे बढ़

सकता है और धार्मिक जीवन जी सकता है। अंत में उसने यह बताया कि परमेश्वर की यह धार्मिकता विश्वासियों के दैनिक जीवन में किस प्रकार प्रकट होनी चाहिए।

कुरिन्थियों के नाम पहली पत्री (55-57 ईस्वी)।

कुरिन्थुस दक्षिणी यूनान का सबसे समृद्ध व्यापारिक नगर था और अखैया प्रान्त की राजधानी भी था। यद्यपि अविश्वासी यहूदियों की ओर से पौलुस को तीव्र विरोध का सामना करना पड़ा, फिर भी उसकी सेवकाई विशेष रूप से अन्यजातियों के बीच बहुत फलदायी रही। अपनी दूसरी मिशनरी यात्रा के दौरान उसने कुरिन्थुस में एक कलीसिया स्थापित की और वहाँ डेढ़ वर्ष तक रहकर विश्वासियों को उनके नए विश्वास की शिक्षा देता रहा (प्रेरितों के काम अध्याय 18 आयत 1 से 18)।

जब पौलुस वहाँ से आगे बढ़ गया, तब कुरिन्थुस से आए कई लोगों ने उसे कलीसिया की चिंताजनक परिस्थितियों के विषय में बताया। वहाँ विभाजन, आपसी मुकदमे और अनैतिकता जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो गई थीं। साथ ही उन्होंने विवाह, कुँवारों और विधवाओं की स्थिति, मूर्तियों को चढ़ाए गए मांस के खाने, कलीसिया में स्त्रियों के आचरण, प्रभु भोज मनाने की रीति, आत्मिक वरदानों के उपयोग तथा मरे हुए के पुनरुत्थान जैसे अनेक विषयों पर प्रश्न भी पूछे। पौलुस ने इन समस्याओं का समाधान करने और उनके प्रश्नों के उत्तर देने के लिए यह पत्री लिखी।

कुरिन्थियों के नाम दूसरी पत्री (55-57 ईस्वी)।

कुछ समय बाद पौलुस के एक सहकर्मी ने उसे कुरिन्थुस की कलीसिया के विषय में उत्साहवर्धक समाचार दिया। अधिकांश विश्वासियों ने पौलुस की शिक्षा और सुधार को स्वीकार कर लिया था और अपने आचरण को बदल लिया था। यद्यपि एक छोटा-सा विद्रोही समूह अभी भी उसके प्रेरिताई अधिकार को स्वीकार नहीं कर रहा था, फिर भी पौलुस ने दूसरी पत्री मुख्यतः इस उद्देश्य से लिखी कि वह उन विश्वासियों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट कर सके जिन्होंने मन फिराया था।

इस पत्री में उसने अपने आचरण और चरित्र का बचाव किया तथा अपने जीवन से संबंधित कुछ ऐसी बातें भी बताईं जो केवल इसी पत्री में मिलती हैं, जिनमें स्वर्ग के उसके अद्भुत दर्शन का उल्लेख भी सम्मिलित है। पौलुस की सभी पत्रियों में यह सबसे अधिक व्यक्तिगत और सबसे कम सिद्धान्तात्मक पत्री मानी जाती है।

गलतियों की पत्री (48-49 ईस्वी)।

यह पत्री एशिया माइनर के रोमी प्रान्त गलातिया (वर्तमान तुर्की) में स्थित अनेक कलीसियाओं के लिए लिखी गई थी। पौलुस ने अपनी पहली मिशनरी यात्रा के दौरान इन कलीसियाओं की स्थापना की थी (प्रेरितों के काम अध्याय 13 आयत 4 से अध्याय 14 आयत 28 तक)। उस क्षेत्र में पौलुस और उसके सहकर्मियों की सेवकाई विशेष रूप से अन्यजातियों के बीच अत्यन्त फलदायी रही।

परन्तु जब पौलुस गलातिया से आगे बढ़ गया, तब कुछ अविश्वासी यहूदी वहाँ पहुँचे। उन्होंने पौलुस की प्रेरिताई पर प्रश्न उठाया और यह शिक्षा देने लगे कि यदि अन्यजाति के लोग परमेश्वर के साथ सही संबंध रखना चाहते हैं, तो उन्हें खतना करवाना और मूसा की व्यवस्था का पालन करना अनिवार्य है। इन झूठी शिक्षाओं का खण्डन करने और विश्वासियों को सच्चे सुसमाचार की ओर लौटने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु पौलुस ने यह पत्री लिखी।

फिलिप्पियों, इफिसियों, कुलुस्सियों और फिलेमोन की पत्रियाँ (60-63 ईस्वी)।

पौलुस ने इन चारों पत्रियों की रचना लगभग एक ही समय और एक ही स्थान से की। उस समय वह रोम में घर में नज़रबंद कैदी के रूप में बंदी था और मसीह में अपने विश्वास के कारण उसे मृत्युदण्ड दिए जाने की भी संभावना थी। अपने इस बंधन के समय में विभिन्न कलीसियाओं से कई लोग उससे मिलने आए। उनके द्वारा लाई गई चिंताओं और प्रश्नों के उत्तर में पौलुस ने ये पत्रियाँ लिखीं।

अपनी दूसरी मिशनरी यात्रा के दौरान (प्रेरितों के काम अध्याय 16 आयत 9 से 40), पौलुस ने मकिदुनिया, अर्थात् वर्तमान उत्तरी यूनान, के फिलिप्पीनगर में एक कलीसिया स्थापित की। वहाँ के विश्वासियों के साथ उसका अत्यन्त गहरा और आत्मीय संबंध बन गया था, और नगर छोड़ने के बाद भी वह उनसे निरन्तर संपर्क बनाए रखता था। जब फिलिप्पी के विश्वासियों को पौलुस के कारावास का समाचार मिला, तो वे बहुत चिंतित हो गए। उसकी स्थिति के विषय में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए उन्होंने अपनी कलीसिया के एक सदस्य इपफ्रुदीतुस को पौलुस के पास रोम भेजा। वह उसके लिए आर्थिक सहायता भी लेकर गया। बाद में पौलुस ने इपफ्रुदीतुस को फिलिप्पी वापस भेजा और उसके हाथ में फिलिप्पियों के नाम यह पत्री भी दी। इस पत्री में उसने विश्वासियों की चिंताओं को दूर करने का प्रयास किया और उन्हें बताया कि यद्यपि वह स्वयं बंधन में है, फिर भी यीशु मसीह का सुसमाचार निरन्तर फैल रहा है। यह पत्री कठिन परिस्थितियों के बीच आनन्द और उत्साह का संदेश देती है।

इसी समय इपफ्रास नामक एक व्यक्ति भी पौलुस से मिलने आया। वह एशिया माइनर के कुलुस्से नगर की कलीसिया के विषय में चिंतित था। कुलुस्से की कलीसिया की स्थापना सीधे पौलुस ने नहीं की थी। सम्भवतः वह इफिसुस नगर में उसकी सेवकाई का परिणाम थी, जो कुलुस्से से लगभग सौ मील की दूरी पर स्थित था। जब पौलुस ने इफिसुस में यीशु का प्रचार किया, तब उसकी सेवकाई इतनी प्रभावशाली सिद्ध हुई कि पूरे एशिया प्रदेश में परमेश्वर का वचन फैल गया (प्रेरितों के काम अध्याय 19 आयत 1 से 20)।

पौलुस के एशिया माइनर छोड़ने के बाद वहाँ एक झूठी शिक्षा फैलने लगी। उसमें यूनानी दर्शन, यहूदी व्यवस्था-प्रधानता और पूर्वी रहस्यवाद के तत्वों का मिश्रण था। किसी अज्ञात कारण से इपफ्रास स्वयं भी बंदी बना लिया गया। इसलिए पौलुस ने अपने एक सहकर्मी तुखिकुस को कुलुस्से भेजा और उसके हाथ में कुलुस्सियों के लिए यह पत्री दी। उसी के साथ उसने इफिसियों के लिए भी एक पत्री भेजी, जिसका एक उद्देश्य उसके कारावास के समाचार से व्याकुल विश्वासियों को सांत्वना देना भी था।

इफिसियों की पत्री पौलुस की सबसे कम व्यक्तिगत पत्रियों में से एक है। सम्भवतः इसका कारण यह है कि इसे केवल एक ही कलीसिया के लिए नहीं, बल्कि अनेक कलीसियाओं में पढ़े जाने के उद्देश्य से लिखा गया था। कुलुस्सियों और इफिसियों की पत्रियों को प्रायः जुड़वाँ पत्रियाँ कहा जाता है, क्योंकि इफिसियों की 155 आयतों में से 78 आयतें कुछ छोटे परिवर्तनों के साथ कुलुस्सियों में भी मिलती हैं।

तुखिकुस के साथ एक और व्यक्ति यात्रा कर रहा था, जिसका नाम उनेसिमुस था। वह एक भागा हुआ दास था। पौलुस की उससे भेंट कारागार में हुई, जहाँ उसने उसे मसीह के पास पहुँचाया। यह भगोड़ा दास फिलेमोन का था, जो स्वयं भी पौलुस के द्वारा मसीह में विश्वास करने वाला बना था और कुलुस्से नगर में रहता था। पौलुस ने फिलेमोन के नाम एक छोटी-सी पत्री लिखी, जिसमें उसने सारी परिस्थिति समझाई और उससे आग्रह किया कि वह अपने पूर्व दास को अब मसीह में अपने भाई के रूप में स्वीकार करे।

थिस्सलुनीकियों के नाम पहली और दूसरी पत्री (51-52 ईस्वी)।

पौलुस ने ये दोनों पत्रियाँ मकिदुनिया की राजधानी थिस्सलुनीके के विश्वासियों के लिए लिखीं। उसने वहाँ एक कलीसिया स्थापित की थी, परन्तु थोड़े ही समय बाद जब वहाँ सताव आरम्भ हो गया, तो उसे नगर छोड़ने के लिए विवश होना पड़ा (प्रेरितों के काम अध्याय 17 आयत 1 से 10)। अविश्वासी यहूदियों ने एक भीड़ को भड़काया, जिसने अन्यजाति के अविश्वासियों को भी अपने साथ मिला लिया, और उन्होंने उस घर पर आक्रमण कर दिया जहाँ पौलुस ठहरा

हुआ था। इसके बाद पौलुस वहाँ से एथेंस और फिर कुरिन्थुस चला गया, जो दोनों यूनान में स्थित थे।

पौलुस अपने नए विश्वासियों के विषय में अत्यन्त चिंतित था। इसलिए उसने उन्हें एक पत्री लिखकर उनके विश्वास में दृढ़ बने रहने के लिए प्रोत्साहित किया, क्योंकि वे निरन्तर सताव का सामना कर रहे थे। उसने उन्हें यौन पवित्रता, भाईचारे का प्रेम, विभिन्न आत्मिक कर्तव्यों तथा प्रभु यीशु के दूसरे आगमन के विषय में भी और अधिक शिक्षा दी। कुछ महीनों बाद पौलुस ने दूसरी पत्री लिखी, क्योंकि उसे समाचार मिला कि प्रभु के आगमन के विषय में उसकी शिक्षा को कुछ लोगों ने गलत समझ लिया था।

तीमुथियुस के नाम पहली और दूसरी पत्री तथा तीतुस के नाम पत्री (62-66 ईस्वी; 66-67 ईस्वी; 62-66 ईस्वी)।

ये पत्रियाँ उन दो व्यक्तियों—तीमुथियुस और तीतुस—के लिए लिखी गई थीं, जिन्हें पौलुस ने विभिन्न कलीसियाओं का अगुवा और चरवाहा नियुक्त किया था। तीमुथियुस पौलुस की सेवकाई के द्वारा मसीह में विश्वास करने वाला बना था, और वह तथा तीतुस दोनों पौलुस की कई मिशनरी यात्राओं में उसके साथ रहे।

रोम के कारावास से मुक्त होने के बाद पौलुस इफिसुस पहुँचा और वहाँ तीमुथियुस से मिला। जब पौलुस मकिदुनिया की यात्रा पर गया, तब उसने इफिसुस की कलीसिया की ज़िम्मेदारी तीमुथियुस को सौंप दी। परन्तु जब उसकी वापसी में विलम्ब हुआ, तब उसने तीमुथियुस को यह पत्री लिखी, ताकि वह अपने इस अपेक्षाकृत युवा और कम अनुभवी सहकर्मी का मार्गदर्शन कर सके, जो इफिसुस की कलीसिया की देखभाल कर रहा था। पौलुस ने अपने इस आत्मिक पुत्र को प्रोत्साहित किया कि वह सच्चे सिद्धान्तों के द्वारा झूठी शिक्षाओं का सामना करे, योग्य अगुवों को तैयार करे, परमेश्वर के वचन का प्रचार करे और विश्वासियों को मसीही जीवन जीने के लिए प्रेरित करे।

बाद में पौलुस पुनः तीमुथियुस से मिला, और फिर तीतुस के साथ क्रीत द्वीप पर गया। कुछ समय तक वहाँ सेवकाई करने के बाद पौलुस वहाँ से आगे बढ़ गया और तीतुस को उस नई कलीसिया की स्थापना तथा अगुवाई करने के लिए वहीं छोड़ दिया। पौलुस जानता था कि क्रीत में सेवकाई अनेक कारणों से कठिन होगी। इसलिए उसने तीतुस को यह पत्री लिखकर उसका उत्साह बढ़ाया। उसने उसे निर्देश दिया कि वह योग्य प्राचीनों की नियुक्ति करे, झूठे शिक्षकों को डाँटे, सच्चे सिद्धान्तों की शिक्षा दे और विश्वासियों को भले कार्यों में लगे रहने के लिए प्रेरित करे।

कुछ वर्षों बाद पौलुस को फिर से रोम में बन्दी बना लिया गया। इस बार उसे मृत्युदण्ड की सज़ा सुनाई गई। अपने शहीद होने से ठीक पहले पौलुस ने कारागार की कोठरी से तीमुथियुस के नाम दूसरी पत्री लिखी। उसने यह पत्री तीमुथियुस को दृढ़ करने, उसका उत्साह बढ़ाने और उसे विश्वासयोग्य बने रहने के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से लिखी। पौलुस ने उसे चेतावनी दी कि झूठे शिक्षक आने वाले हैं। उसने तीमुथियुस को समझाया कि वह भयभीत न हो, बल्कि अपनी सेवकाई को पूरी निष्ठा के साथ पूरा करे, आवश्यकता पड़ने पर मसीह के लिए दुःख उठाने को तैयार रहे, और परमेश्वर के वचन का निरन्तर प्रचार करता रहे।

इब्रानियों की पत्री (64-68 ईस्वी)।

यह पत्री उन यहूदी मसीहियों के लिए लिखी गई थी जिन पर उनके अपने देशवासी दबाव डाल रहे थे कि वे यीशु का इन्कार कर दें, क्रूस पर दिए गए उनके बलिदान को अस्वीकार कर दें और फिर से यहूदी धर्म में लौट जाएँ। ये विश्वासी पहले ही वाचिक अपमान और अपनी संपत्ति के नुकसान का सामना कर चुके थे, और उनसे भी अधिक कठोर सताव का खतरा उनके सामने था।

इब्रानियों की पत्री उन्हें यह समझाने और प्रोत्साहित करने के लिए लिखी गई कि चाहे जो भी परिस्थितियाँ आएँ, वे मसीह के प्रति विश्वासयोग्य बने रहें। इस पत्री का मुख्य शब्द है “उत्तम”। इसका लेखक, जिसने अपना नाम नहीं लिखा, पुराने नियम का उपयोग करके यह सिद्ध करता है कि यीशु का व्यक्तित्व और उनका कार्य उस सम्पूर्ण व्यवस्था से कहीं अधिक महान और श्रेष्ठ है जिसे ये विश्वासी पीछे छोड़ चुके थे। वह उन्हें स्मरण कराता है कि यीशु में उन्हें एक उत्तम आशा, एक उत्तम वाचा, उत्तम प्रतिज्ञाएँ, एक उत्तम देश और एक उत्तम पुनरुत्थान प्राप्त हुआ है।

सामान्य पत्रियाँ।

पौलुस की पत्रियों के बाद नए नियम में सामान्य पत्रियाँ आती हैं। इन्हें सामान्य पत्रियाँ इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये किसी एक विशेष कलीसिया या किसी एक व्यक्ति के लिए नहीं, बल्कि सामान्य रूप से सभी मसीहियों के लिए लिखी गई थीं। इन पत्रियों के मूल प्राप्तकर्ताओं का स्थान प्रायः निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है, और इनमें दिए गए अभिवादन भी सामान्य प्रकृति के हैं। इन पत्रियों को उनके लेखकों—याकूब, पतरस, यूहन्ना और यहूदा—के नाम से जाना जाता है, न कि उन लोगों के नाम से जिनके लिए वे लिखी गई थीं।

याकूब की पत्री (46-49 ईस्वी)।

संभवतः याकूब की पत्री नए नियम का सबसे प्रारम्भिक लिखित ग्रंथ है। याकूब ने इसे पूरे रोमी साम्राज्य में रहने वाले यहूदी विश्वासियों के लिए लिखा। यह पत्री प्रभु यीशु की शिक्षाओं से परिपूर्ण है और इसमें उनके पर्वत पर दिए गए उपदेश के साथ अनेक समानताएँ दिखाई देती हैं। याकूब की लेखन शैली पुराने नियम की नीतिवचन पुस्तक के समान है, इसलिए यह मसीह में नए-नए विश्वास करने वाले यहूदी स्त्री-पुरुषों के लिए सहज और परिचित थी। इस पत्री में याकूब ने अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर शिक्षा दी है, जिनमें परीक्षाओं के द्वारा विश्वास की जाँच तथा विश्वास और कर्मों के पारस्परिक संबंध का विशेष उल्लेख है।

पतरस की पहली और दूसरी पत्री (64 ईस्वी; 64-66 ईस्वी)।

पतरस ने ये दोनों पत्रियाँ उत्तरी एशिया माइनर के विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले यहूदी विश्वासियों के लिए लिखीं। उस समय रोमी साम्राज्य में मसीहियों के प्रति विरोध और संदेह निरन्तर बढ़ रहा था। यद्यपि उस समय तक मसीही विश्वास पर औपचारिक प्रतिबंध नहीं लगाया गया था, फिर भी व्यापक सताव आरम्भ होने की परिस्थितियाँ तैयार हो चुकी थीं। सरकार की ओर से संगठित सताव अभी प्रारम्भ नहीं हुआ था, परन्तु स्थानीय लोग मसीहियों की निन्दा करने और उन पर सामाजिक दबाव डालने लगे थे। ऐसी परिस्थितियों में पतरस ने विश्वासियों को प्रोत्साहित किया कि वे प्रभु यीशु के उदाहरण का अनुसरण करें और धैर्यपूर्वक दुःख सहें।

पतरस ने अपनी दूसरी पत्री पहली पत्री के कुछ समय बाद लिखी, जब वह स्वयं मृत्युदण्ड का सामना कर रहा था। उस समय रोमी साम्राज्य के अन्य भागों में झूठे शिक्षक विश्वासियों को भ्रमित कर रहे थे, और शीघ्र ही उनका प्रभाव एशिया माइनर तक भी पहुँचने वाला था। ये विधर्मी शिक्षक न केवल अनैतिक जीवन जीते थे, बल्कि वे मसीह के परमेश्वरत्व का इन्कार करते थे, पापों के लिए उनके बलिदान को अस्वीकार करते थे और उनके दूसरे आगमन पर भी विश्वास नहीं करते थे। पतरस चाहता था कि उसकी मृत्यु के बाद भी विश्वासियों के पास सच्ची शिक्षा का एक स्थायी अभिलेख बना रहे। इसलिए उसने यह पत्री लिखकर उन्हें उन सत्यों का स्मरण कराया जिन पर उन्होंने विश्वास किया था, ताकि वे उनमें दृढ़ बने रहें।

यूहन्ना की पहली, दूसरी और तीसरी पत्रियाँ (81-96 ईस्वी; 90 ईस्वी; 90 ईस्वी)।

यूहन्ना भी उन झूठे शिक्षकों से भली-भाँति परिचित था जो एशिया की कलीसियाओं में प्रवेश कर रहे थे। इसलिए उसने भी उनके प्रभाव का सामना करने के लिए अपनी पत्रियाँ लिखीं। आगे चलकर दूसरी शताब्दी में यही भ्रामक शिक्षाएँ एक बड़े विधर्म के रूप में विकसित हुईं, जिसे **ज्ञानवाद** कहा गया। अपनी पहली पत्री में यूहन्ना ने केवल झूठी शिक्षाओं का खण्डन ही नहीं किया, बल्कि उसने प्रेम, आज्ञाकारिता, उद्धार का दृढ़ आश्वासन और विश्वास जैसे विषयों को भी अत्यन्त सुंदर ढंग से एक साथ प्रस्तुत किया है।

यूहन्ना की दूसरी और तीसरी पत्रियाँ बाइबल की सबसे छोटी पुस्तकों में गिनी जाती हैं। ये दोनों व्यक्तिगत पत्र हैं और उनकी विषयवस्तु में भी काफी समानता है। इन पत्रियों में झूठे शिक्षकों के प्रति सावधान किया गया है तथा सच्चे विश्वासियों को प्रोत्साहित किया गया है।

दूसरी पत्री यूहन्ना ने एक ऐसी स्त्री को लिखी जिसका नाम नहीं बताया गया है और जो अपने घर में विश्वासियों की सभा आयोजित करती थी। उसने उसे चेतावनी दी कि वह झूठे शिक्षकों को अपनी गृह-कलीसिया में प्रवेश करके अपनी गलत शिक्षाओं का प्रचार करने का अवसर न दे। साथ ही, यूहन्ना ने यह भी समझाया कि मसीहियों का झूठे शिक्षकों के प्रति कैसा दृष्टिकोण और व्यवहार होना चाहिए।

तीसरी पत्री उसने गयुस नामक एक विश्वासी के लिए लिखी और उसे उसकी कलीसिया में उत्पन्न हुई एक विशेष समस्या का उचित समाधान करने के लिए प्रोत्साहित किया।

यहूदा की पत्री (64-66 ईस्वी)।

यहूदा का प्रारम्भिक उद्देश्य उद्धार और विश्वास के विषय में लिखना था। सम्भवतः उसने यह पत्री यहूदी विश्वासियों के लिए लिखने का विचार किया था, और सम्भव है कि उसके पाठक वही लोग रहे हों जिन्हें पतरस और याकूब की पत्रियाँ भी प्राप्त हुई थीं। परन्तु जब उसने देखा कि झूठे शिक्षक कलीसियाओं में प्रवेश कर रहे हैं, तब उसने अपना विषय बदल दिया।

ये विधर्मी स्थानीय कलीसियाओं में घुस आए थे और यीशु मसीह के अनुग्रह, उनकी पवित्रता तथा उनके प्रभुत्व का इन्कार कर रहे थे। इसलिए यहूदा ने अपने पाठकों को सावधान करने के लिए यह पत्री लिखी, ताकि वे इन नैतिक और सिद्धान्तगत आक्रमणों के सामने विश्वास के लिए दृढ़ता से खड़े रहें और उसकी रक्षा करें। यह पूरी पत्री झूठे शिक्षकों और उस न्याय के विषय में है जो अंततः उन पर आने वाला है।

प्रकाशितवाक्य की पुस्तक (95 ईस्वी)।

प्रकाशितवाक्य बाइबल की अंतिम पुस्तक है और नए नियम का सबसे अंतिम लिखा गया ग्रंथ भी है। यह पूर्णतः उपयुक्त है, क्योंकि प्रकाशितवाक्य परमेश्वर की अपने परिवार के लिए बनाई गई योजना की अंतिम पूर्णता का प्रत्यक्षदर्शी विवरण प्रस्तुत करता है।

लगभग 95 ईस्वी में प्रभु यीशु मसीह अपने प्रेरित यूहन्ना पर प्रकट हुए और उन्हें जो कुछ उन्होंने देखा और सुना, उसे लिख लेने की आज्ञा दी। अध्याय 1 में यूहन्ना द्वारा देखे गए प्रभु यीशु के दर्शन का वर्णन है, और अध्याय 2 तथा 3 में उस समय अस्तित्व में रहने वाली विशेष कलीसियाओं के लिए प्रभु यीशु के संदेश और निर्देश दिए गए हैं।

अध्याय 4 से 20 तक यूहन्ना को दी गई भविष्यद्वाणी संबंधी प्रकाशन का विस्तृत विवरण मिलता है। उसे उन घटनाओं को दिखाया गया जो प्रभु यीशु के दूसरे आगमन और पृथ्वी पर परमेश्वर के अनन्त राज्य की स्थापना से पहले घटित होंगी। अपने दर्शन में यूहन्ना को स्वर्ग में उठा लिया गया, जहाँ उसने देखा कि जैसे-जैसे संसार सर्वशक्तिमान परमेश्वर को त्यागकर शैतान से प्रेरित और उसकी सामर्थ से समर्थित एक अंतिम विश्व-शासक का अनुसरण करेगा, वैसे-वैसे पृथ्वी पर एक के बाद एक अत्यन्त भयानक और विनाशकारी घटनाएँ घटित होंगी।

प्रकाशितवाक्य के अंतिम दो अध्याय नए आकाश और नई पृथ्वी का अद्भुत वर्णन प्रस्तुत करते हैं। यह वही पृथ्वी होगी जिसे परमेश्वर पूर्णतः नया, शुद्ध और पुनर्स्थापित करेंगे, ताकि वह सदैव के लिए परमेश्वर और उनके परिवार का योग्य तथा अनन्त निवास-स्थान बन सके।

संदर्भ सूची।

स्ट्रॉन्ग, जेम्स। 2004. स्ट्रॉन्ग्स कम्प्लीट वर्ड स्टडी कॉनकॉर्डन्स: विस्तृत संस्करण। संपादक: वॉरेन बेकर। चैटानूगा, टेनेसी: एएमजी पब्लिशर्स।

वाइन, डब्ल्यू. ई. 1996. वाइन्स कम्प्लीट एक्सपोजिटरी डिक्शनरी ऑफ ओल्ड एंड न्यू टेस्टामेंट वर्ड्स। संपादक: मेरिल एफ. उंगर, थी.एम., थी.डी., पीएच.डी. तथा विलियम व्हाइट जूनियर, थी.एम., पीएच.डी. नैशविल, टेनेसी: थॉमस नेल्सन, इंक।

वेब्सटर्स न्यू स्टूडेंट्स डिक्शनरी। 1969. स्प्रिंगफील्ड, मैसाचुसेट्स: जी एंड सी मेरियम कंपनी।

मेरियम-वेबस्टर ऑनलाइन शब्दकोश, 18 दिसम्बर 2021 को देखा गया।

<https://www.merriam-webster.com>

“वर्ष का शब्द 2016।” ऑक्सफोर्ड लैंग्वेजेज़, 18 दिसम्बर 2021 को देखा गया।

<https://languages.oup.com/word-of-the-year/2016/>

